www.thearyasamaj.org

||ओ३म्||

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वमार्यम् अपघ्नन्तो अरावणः।।

आर्य संकल्प

(बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा का मासिक मुख-पत्र)

वर्ष-36 अक्टूबर अंक-10

बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा

कार्यालय : श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 (बिहार)

www.thearyasamaj.org

आर्य संकल्प

सम्पादक
रमेन्द्र कुमार गुप्ता
मो. 9334184136

सह सम्पादक
संजय सत्यार्थी
मो. 9006166168
प्रेम कुमार आर्य
मो. 9570913817

सम्पादक मंडल
पं० व्यासनन्दन शास्त्री
श्री बिन्देश्वरी शर्मा
मो. 8544088138

संरक्षक
गंगा प्रसाद
सभा प्रधान

कोषाध्यक्ष
सत्यदेव गुप्ता
स्वत्वाधिकारी एवं प्रकाशक
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन
नयाटोला, पटना-800 004
दूरभाष : 07488199737
E-mail_arya.sankalp3@gmail.com
सदस्यता शुल्क
एक प्रति : 15/-
वार्षिक : 120/-

मुद्रक :
जय उमा प्रिन्टर्स
मो. 9430246879

संपादकीय

कर्म से व्यक्ति महान बनता है

परमात्मा अपनी वेद रूपी पवित्र ज्ञान दे कर संसार के कर्म और व्यवहार के नियम बतला दिये हैं किन्तु उसके आचरण का दूसरे शब्दों में परीक्षा का समय आता है, तब वह किसी को कैसे बता सकता है? फिर भी उनकी असीम करूणा है कि बुराई करने के समय मनुष्य के मन में भय लज्जा-और शंका उत्पन्न कर उसे बुराई न करने का संकेत करता है और शुभ कर्म के समय हर्ष और उत्साह जगाकर वैसा आचरण करने की प्रेरणा करता है। फिर भी यह जानना आवश्यक है कि जीव कर्म करने में स्वतंत्र और फल भोगने में ईश्वर के अधीन है। अतः कर्म ऐसा हो जिससे किसी को कोई हानि न हो। संसार के उपकार के लिये ही कर्म किये जाने चाहिये। कर्म यज्ञमय होना चाहिये। यज्ञ मय कर्म होने से उसके गुण जीवन को आनन्दमय बनाकर उन्नति की ओर ले जायेगा, जिससे मोक्ष का मार्ग प्रशस्त होगा। वर्तमान शरीर ही वह स्थल है जहाँ मनुष्य कर्मों का फल भी भोगता है और नए कर्म भी करता है। यह नवीन कर्म उस प्रकार का हो जो आवागमन के चक्र से छुटकारा दिला सके। अतः प्रभु का ज्ञान अगर आचरण का अंग नहीं बनता है तो वह निरर्थक है। कर्म तीन प्रकार के होते हैं-

1. **क्रियमान**- वर्तमान में जो कर्म किया जा रहा है, जैसे किसान का खेत में बीज बोना।

2. **संचित**- वोया हुआ बीज अंकुरित हो कर फल पकने तक जिस स्थिति में रहता है। जैसे क्रियमान का संस्कार ज्ञान में जमा होना।

3. **प्रारब्ध**- जो पूर्व किये हुये कर्मों के सुख-दुख रूप फल को भोग किया जाता है अर्थात् पकी हुई फल काटकर, दाने निकाल कर घर ले जाने का नाम प्रारब्ध है।

पं० संजय सत्यार्थी
सह-संपादक

www.thearyasamaj.org

आर्य संकल्प

-: सूची :-

क्रम	विवरण	पृष्ठ संख्या
1.	सम्पादकीय	
2.	वेद मंत्र	1
3.	धर्म की यथार्थता	2
4.	"आर्य समाज को राजनीति	13
5.	विजयदशमी पर्व	19
6.	सृष्टि में प्रजनन की प्रक्रिया	23
7.	समाचार	32

इस पत्रिका में दिये गये लेख लेखकों के अपने विचार हैं, इससे सम्पादक का कोई सम्बन्ध नहीं है ।

अक्टूबर

अबला नहीं सबला

अवीरामिव मामयं शरारुरभि मन्यते।
उताहमस्मि वीरिणीन्द्रपत्नी मरुत्सखा
विश्वस्मादिन्द्र उत्तरः॥

(ऋ० 10 । 86 । 9)

शब्दार्थ- (अयं शरारुः) यह घातक, शत्रु, आकान्ता (मामू) मुझे (अवीराम् इव) अबला की भाँति (अभि मन्यते) मानता है। मैं अबला नहीं हूँ (वीरिणी अस्मि) वीरांगना हूँ (इन्द्रपत्नी) मैं वीर की पत्नी हूँ (मरुत् सखा) मृत्यु से न डरनेवाले, प्राणों को हथेली पर रखनेवाले वीर सैनिकों की मैं मित्र हूँ (इन्द्रः) ऐश्वर्यशाली मेरा पति (विश्वस्मात् उत्तरः) संसार में सबसे श्रेष्ठ है।

भावार्थ- वेद में नारी का जो गौरव, प्रतिष्ठा, मान और सम्मान है वह संसार के अन्य साहित्य में कही भी नहीं है। प्रस्तुत मन्त्र में एक नारी की अपने सम्बन्ध में प्रबल सिंहगर्जना है-

1. अरे! यह शत्रु मुझे अबला समझता है। सुन, कान खोलकर सुन! मैं अबला नहीं हूँ, सबला हूँ। समय-समय पर नारियों ने अपनी वीरता के जोहर दिखाए हैं। झाँसी की रानी को कौन भूल सकता है?

2. मैं वीर-पत्नी हूँ।

3. मैं कायरों, भीरुओं के साथ मैत्री नहीं करती, उनके साथ सहानुभूति नहीं रखती, अपितु जो मरने-मारने के लिए तैयार रहते हैं उन्हें ही अपना सखा बनाती हूँ।

4. मेरा पति इतना वीर है कि संसार में उस-जैसा कोई दूसरा वीर नहीं है।

■

www.thearyasamaj.org

धर्म की यथार्थता

- हरिशंकर अग्निहोत्री, आगरा

किसी भी शब्द के अर्थ को ठीक-ठीक (यथार्थ रूप में) जानकर ही सही प्रयोग किया जा सकता है। जैसे यज्ञ का अर्थ केवल हवन (करने) के लिए गौण हो गया है जबकि यज्ञ का अर्थ देव-पूजा, संगतिकरण और दान करना है। महर्षि दयानन्द के शब्दों में यज्ञ उसको कहते हैं कि **''जिसमें 'माता-पिता', विद्वानों का सत्कार यथायोग्य शिल्प अर्थात् रसायन जो कि पदार्थ विद्या उससे उपयोग और विद्यादि शुभगुणों का दान अग्निहोत्रादि जिनसे वायु, वृष्टि, जल ओषधि की पवित्रता करके सब जीवों को सुख पहुँचाना है।''** यज्ञ सम्पूर्ण कामनाओं को पूर्ण करता है, यह पूर्ण सत्य है लेकिन इसके लिए यज्ञ करना एवं यज्ञ के सम्पूर्ण अर्थ को जानकर इन्हें जीवन में धारण करना चाहिए। इसी प्रकार 'धर्म' शब्द पूजा के लिए गौण हो गया है। जन सामान्य के अनुसार जो लोग पूजा करते-कराते हैं वे धार्मिक कहलाते हैं, पूजा स्थल को धार्मिक स्थल कहा जाता है, पूजा साहित्य (पुस्तकों) को धार्मिक साहित्य कहा जाता है। क्या इसके अतिरिक्त और कोई धर्म और धार्मिक नहीं है? क्या ईमानदारी से व्यापार करने वाला व्यक्ति धार्मिक नहीं है? क्या जीवों पर दया करना धर्म नहीं है? क्या माता-पिता की सेवा करना धर्म नहीं है? क्या राष्ट्र हित में अपना सर्वस्व समर्पित करने वाला व्यक्ति धार्मिक नहीं है? उपरोक्त प्रश्नों का उत्तर सोचते हैं या पूछते हैं तो उत्तर धर्म है ऐसा आता है। अर्थात् माता-पिता की सेवा करना धर्म है। ईमानदारी से व्यापार करना धर्म है, राष्ट्रहित में बलिदान धर्म है तो फिर धर्म का यथार्थ रूप क्या है?

धर्म बहुत व्यापक है जिसमें पूजा का भी स्थान है लेकिन पूजा सम्पूर्ण धर्म नहीं उसका एक अंग है। (वास्तव में वेदानुकूल पूजा ही धर्म है, वेद विरुद्ध पूजा धर्म नहीं)। व्यक्तिगत, आत्मिक, पारिवारिक, सामाजिक, राष्ट्रीय एवं विश्व उन्नति के लिए अपनाये गये सभी उचित कर्त्तव्य धर्म के अन्तर्गत आते हैं।

-: धर्म की परिभाषा :-

भाषा वैज्ञानिक महामुनि पाणिनि कृत व्याकरण के अनुसार धृञ्धारणे धातु से मन् प्रत्यय के योग से **''धर्म''** शब्द सिद्ध होता है। **''धारणात् धर्म इत्याहु:'' ध्रियते अनेन लोक:''** आदि व्युत्पत्तियों के अनुसार जिसे आत्मोन्नति और उत्तम सुख के लिए धारण

www.thearyasamaj.org

किया जाय अर्थात् व्यवस्था या मर्यादा में रखा जाय उसे धर्म कहते हैं। इस प्रकार आत्मा की उन्नति करने वाला, मोक्ष तथा उत्तम व्यावहारिक सुख को देने वाला सदाचार कर्तव्य अथवा श्रेष्ठ विधान नियम धर्म है। वैशेषिक दर्शनकार महर्षि कणाद धर्म के विषय में लिखते हैं- "**अथातो धर्म व्याख्यास्यामः**" (वैशेषिक 1/1/1) अनन्तर धर्म की व्याख्या करेंगे और आगे लिखते हैं- "**यतोऽभ्युदय निःश्रेयस सिद्धिः स धर्मः**" (वैशेषिक 1/1/2) अर्थात् जिसके आचरण से मनुष्य की शारीरिक, मानसिक एवं आत्मिक उन्नति, व्यावहारिक उत्तम सुख की प्राप्ति एवं वृद्धि हो तथा मोक्ष सुख की सिद्धि हो वह आचरण या कर्तव्य धर्म है जिससे अभ्युदय और निःश्रेयस की प्राप्ति होगी उसे, किसके आधार पर समझें इसका उत्तर देते हुए महर्षि लिखते हैं-

"**तद्वचनादाम्नायस्य प्रामाण्यम्**" (वैशेषिक 1/1/3) आम्नाय-वेद प्रामाण्य है अर्थात् धर्म के विषय में वेद ही प्रमाण है। धर्म का ही आचरण करने से कल्याण होता है। धर्म हमें कहाँ से प्राप्त होगा? जो हमें आचरण करना है उस आचरण को कौन बताएगा? ऐसा ही प्रश्न अन्य ऋषियों के सामने आया। "**अथातो धर्म जिज्ञासा**" (मीमांसा 1/1/1) धर्म को जानने की इच्छा के लिए विचार किया जाता है कहकर मीमांसा दर्शनकार महामुनि जैमिनि आरम्भ करते हैं तथा धर्म के विषय को स्पष्ट करते हुए लिखा कि - "**चोदना लक्षणोऽर्थो धर्मः**" (मीमांसा 1/1/2) चोदना= प्रेरण=विधि वाक्य= वेद अर्थात् वेदों से मनुष्यों को करने के लिए जो कर्तव्य विहित किये हैं वह धर्म है। महर्षि दयानन्द सरस्वती "सत्यार्थ प्रकाश" में लिखते हैं- "जो पक्षपात रहित, न्याययाचरण, सत्यभाषणादि युक्त ईश्वराज्ञा वेदों से अविरुद्ध है उसको धर्म और पक्षपात सहित अन्यायाचरण, मिथ्या भाषणादि ईश्वराज्ञा भंग वेद विरुद्ध है उसको अधर्म मानता हूँ।"

महर्षि दयानन्द द्वारा दी गई धर्म-अधर्म की परिभाषा एक कसौटी है, यदि पक्षपात नहीं हो रहा है, सत्यता के साथ न्याय किया जा रहा है तो धर्म है और यदि पक्षपात हो रहा है, झूठ का सहारा लेकर अन्याय हो रहा है तो वह चाहे कोई भी करे अधर्म हो रहा है तथा सत्यासत्य का अन्तिम प्रमाण वेद ही है।

-: धर्म की जाँच के प्रमाण :-

वेद धर्म है और वेद के विरुद्ध अधर्म है लेकिन आज संसार में अनेक धर्म कहे जा रहे हैं। देश, काल, परिस्थिति के अनुसार स्वार्थवश, अज्ञानवश कुछ व्यक्तियों ने संगठन बनाये जो मत, पंथ, सम्प्रदाय हैं। जिन्हें आज

www.thearyasamaj.org

धर्म कहा जा रहा है। तो क्या अनेक धर्म हैं? क्या अनेक धर्म हो सकते हैं? वेद ही क्यों धर्म है? धर्म एक है। अनेक नहीं हो सकते। सत्य का कोई विकल्प नहीं है- अनेक सत्य नहीं होते तथा सत्य के साथ दूसरा कहलाने वाला असत्य होता है। जब सत्य धर्म है तो असत्य दूसरा धर्म नहीं है। असत्य अधर्म है। इसी प्रकार चूंकि वेद परमात्मा प्रदत्त है अतः वेद ही धर्म है, दूसरा वेद विरोधी अधर्म है। हम सभी मत, पंथ, सम्प्रदायों को धर्म मान लेते यदि वे सभी एक जैसी व सत्य बात करते, जबकि ये एक दूसरे के विरोधी हैं। जब दो व्यक्ति विरोधी बातें कर रहे हों तो दोनों सत्य (सही) नहीं हो सकते, दोनों गलत तो हो सकते हैं, एक सही हो सकता है इसका पैमाना क्या है अर्थात् कैसे जाँच की जाय कि कौन सही है, कौन गलत है? इसका उत्तर महर्षि दयानन्द सरस्वती 'व्यवहार भानु' में लिखते हैं- सत्य का निर्णय करने के लिए।

1. ईश्वर, उसके गुण कर्म स्वभाव और वेद विद्या।

2. सृष्टि क्रम।

3. प्रत्यक्ष आदि आठ प्रमाण।

4. आप्तों का आचार-उपदेश-ग्रन्थ और सिद्धान्त।

5. अपने आत्मा की साक्षी, अनुकूलता, जिज्ञासा, पवित्रता और विज्ञान।

1- **'ईश्वरादि से परीक्षा'** करना इसको कहते हैं कि जो-जो ईश्वर के न्याय आदि गुण पक्षपातरहित सृष्टि बनाने का कर्म और सत्य, न्याय, दयालुता, परोपकारिता आदि स्वभाव और वेदोपदेश से सत्य धर्म ठहरे वही सत्य और धर्म और जो-जो असत्य और अधर्म ठहरे वही असत्य और अधर्म है। जैसे कोई कहे कि बिना कारण और कर्ता के कार्य होता है तो सर्वथा मिथ्या जानना। इससे यह सिद्ध होता है कि जो सृष्टि की रचना करने हारा पदार्थ है वही ईश्वर और उसके गुण-कर्म-स्वभाव वेद और सृष्टिक्रम से ही निश्चित जाने जाते हैं।

2- **'सृष्टिक्रम'** उसको कहते हैं कि जो-जो सृष्टिक्रम अर्थात् सृष्टि के गुण, कर्म, और स्वभाव से विरुद्ध हो वह मिथ्या और अनुकूल हो वह सत्य कहाता है। जैसे कोई कहे बिना माँ बाप का लड़का, कान से देखना, आँख से बोलना आदि होता वा हुआ है ऐसी-ऐसी बातें सृष्टिक्रम के विरुद्ध होने से मिथ्या माता-पिता से सन्तान, कान से सुनना और आँख से देखना आदि सृष्टिक्रम के अनुकूल होने से सत्य ही है।

3- **'प्रत्यक्षादि आठ प्रमाणों से परीक्षा'** करना उसको सत्य कहते हैं कि जो-जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों से ठीक-ठीक ठहरे वह सत्य और जो-जो विरुद्ध ठहरे वह मिथ्या समझना चाहिए। जैसे किसी ने किसी से कहा कि यह क्या है दूसरे ने कहा कि पृथिवी। यह **'प्रत्यक्ष'** है। इसको देखकर इसके कारण का निश्चय

करना '**अनुमान**'-। जैसे बिना बनाने हारे के घर नहीं बन सकता वैसे ही सृष्टि का बनाने हारा ईश्वर भी बड़ा कारीगर है, यह दृष्टान्त '**उपमान**' और सत्योपदेष्टाओं का उपदेश वह '**शब्द**'। भूतकालस्थपुरुषों की चेष्टा, सृष्टि आदि पदार्थों की कथा आदि को '**ऐतिह्य**'। एक बात को सुनकर बिना सुने कहे प्रसंग से दूसरी बात को जान लेना यह '**अर्थापत्ति**'। कारण से कार्य होना आदि को '**सम्भव**' और आठवां अभाव अर्थात् किसी ने किसी से कहा कि जल ले आ। उसने वहाँ जल के अभाव को जानकर तर्क से जाना कि जहाँ जल है वहाँ से जल लाकर देना चाहिए, यह '**अभाव**' का प्रमाण कहाता है। इन आठ प्रमाणों से जो विपरीत न हो वह-वह सत्य और जो-जो उलटा हो वह मिथ्या है।

4- '**आप्तों के आचार और सिद्धान्त से परीक्षा**' करना उसको कहते हैं जो-जो सत्यवादी, सत्यकारी, सत्यमानी, पक्षपातरहित, सब के हितैषी, विद्वान् सब के सुख के लिए प्रयत्न करें वे धार्मिक लोग आप्त कहाते हैं। उनके उपदेश, आचार, ग्रन्थ और सिद्धान्त से जो युक्त हो वह सत्य और जो विपरीत हो वह मिथ्या है।

5- '**आत्मा से परीक्षा**' उसको कहते हैं कि जो-जो अपना आत्मा अपने लिए चाहे सो-सो सबके लिए चाहना और जो-जो न चाहे सो-सो किसी के लिए चाहना। जैसा आत्मा में वैसा मन में जैसा मन में वैसा क्रिया में होने को जानने की इच्छा, शुद्ध भाव और विद्या के नेत्र से देखकर सत्य और असत्य का निश्चय करना चाहिए। इन पाँच प्रकार की परीक्षाओं से पढ़ने-पढ़ाने हारे तथा सब मनुष्य सत्याऽसत्य का निर्णय करके धर्म का ग्रहण और अधर्म का परित्याग करें करावें। उपरोक्त पाँचों प्रमाणों का आधार भी वेद ही है क्योंकि ईश्वर, आप्त, ग्रन्थ आदि के विषय की स्पष्टता, सत्यता वेद ज्ञान से ही सम्भव है।

आज संसार में विभिन्न मत-पन्थ-सम्प्रदाय चल रहे हैं। सभी एक दूसरे के विरोधी हैं तथा धर्म कहलाते हैं जोकि धर्म नहीं हो सकते। धर्म मेल को कहते हैं विरोधी को नहीं। विरोधी होने पर कोई न कोई गलत है जैसे एक अध्यापक ने 40 विद्यार्थियों को एक गणित का प्रश्न हल करने को दिया जिनमें से 15 विद्यार्थियों का उत्तर सही था तथा 25 विद्यार्थियों का उत्तर गलत था। यदि अब प्रश्न यह कर दिया जाय कि समानता 15 विद्यार्थियों के उत्तर में है या 25 विद्यार्थियों के उत्तर में हैं तो उत्तर होगा कि 15 विद्यार्थियों के उत्तर में समानता है क्योंकि यह सही है। सही-सही ही मिलता है, गलत-गलत नहीं मिलता। विभिन्न

www.thearyasamaj.org

सम्प्रदायों का एक दूसरे के साथ वैचारिक मतभेद (न मिलना) यह बताता है कि कोई न कोई गलत है। अगर सभी सही-सही होते तो मेल अवश्य होता। इसीलिए सार्वभौमिक, सार्वकालिक एवं सार्वदेशिक वेद ही धर्म है। अत: वेद पर ही चलना चाहिए।

सत्य सनातन वैदिक धर्म के आगे दुनियाँ का कोई साम्प्रदायिक अपने सम्प्रदाय की डींग नहीं मार सकता है।

-: धर्म का व्यावहारिक रूप :-

एक बार ऋषि, एकाग्रता पूर्वक बैठे हुए महाराज मनु के पास जाकर और उनका यथोचित सत्कार करके बोले- हे भगवन् आप ही धर्म कर्तव्यों को बताने में समर्थ हैं। कृपा करके हमें बताइये। इस जिज्ञासा रूपी प्रश्न के उत्तर में महाराज मनु ने सही कर्तव्यों और धर्म का मूल वेद को कहा-

वेदोऽखिलो धर्म मूलं स्मृति
शीले च तद्विदाम्।
आचारश्चैवं साधुनात्मनस्तुष्टिरेव च॥

मनु० (1/125)

सम्पूर्ण वेद अर्थात् चारों वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) के पारंगत विद्वानों के रचे हुए स्मृति ग्रन्थ (वेदानुकूल धर्मशास्त्र), श्रेष्ठ गुणों से सम्पन्न स्वभाव एवं श्रेष्ठ सत्याचरण करने वाले पुरुषों का सदाचार तथा ऐसे ही श्रेष्ठ सदाचरण करने वाले व्यक्तियों की अपनी आत्मा तथा ऐसे श्रेष्ठ सदाचरण करने वाले व्यक्तियों की अपनी आत्मा की सन्तुष्टि के कार्य धर्म के मूल हैं। उपरोक्त श्लोक के माध्यम से धर्म के विषय में व्यापक समाधान दिया है इसमें चार प्रश्नों के उत्तर हैं।

प्रश्न 1- धर्म का मूल स्त्रोत क्या है?

उत्तर- धर्म का मूल स्त्रोत वेद है।

प्रश्न 2- क्या वेद के अतिरिक्त ग्रन्थ भी धर्म ग्रन्थ है?

उत्तर- स्मृति आदि धर्मग्रन्थ (वेदानुकूल)।

प्रश्न 2- स्मृतियों के अतिरिक्त धर्म की जानकारी कैसे होगी?

उत्तर- वेदानुकूल आचरण करने वाले साधुओं के आचरण से।

प्रश्न 1- साधुओं के आचरण के अतिरिक्त धर्म को कैसे जानें?

उत्तर- श्रेष्ठ आचरण करने वाले व्यक्तियों की आत्मा की सन्तुष्टि के कार्यों से।

इन चारों प्रश्नों पर थोड़ा-थोड़ा प्रकाश डालते हैं। प्रथम प्रश्न के उत्तर में महाराज मनु का कथन है कि **(वेदोऽखिलो धर्म मूलं)** वेद धर्म का मूल है। क्योंकि वेद परमात्मा की वाणी है। इस सन्दर्भ में कुछ कसौटियाँ इस प्रकार हैं।-

1. ईश्वरीय ज्ञान मानव सृष्टि के आरम्भ में होना चाहिए।

2. ईश्वरीय ज्ञान पूर्ण होना चाहिए।

www.thearyasamaj.org

3. ईश्वरीय ज्ञान में ईश्वर के बनाये संसार के साथ एक रूपता होनी चाहिए।

4. ईश्वरीय ज्ञान विज्ञान के अनुकूल होना चाहिए।

5. ईश्वरीय ज्ञान पक्षपात रहित (मनुष्य मात्र के लिए) होना चाहिए।

वेद ही उपरोक्त कसौटियों पर खरा उतरता है अत: वेद ज्ञान ही ईश्वरीय ज्ञान है। इसीलिए वेद ही धर्म है।

द्वितीय प्रश्न- जब वेद को न पढ़ सकें तो धर्म की जानकारी कैसे हो? इस प्रश्न के उत्तर में मनु महाराज कहते हैं- **(स्मृति शीले च तद्विदाम्)** स्मृति आदि से धर्म का ज्ञान प्राप्त होगा। इस प्रकार के उत्तर पर क्या सभी स्मृतियाँ धर्म ग्रन्थ की श्रेणी में आयेंगी? क्या पुराण धर्म ग्रन्थ की श्रेणी में आयेंगे? क्या साम्प्रदायिक ग्रन्थ भी धर्म ग्रन्थ की श्रेणी में आयेंगे? इसका उत्तर यह होगा कि वे ही स्मृतियाँ या ग्रन्थ धर्म ग्रन्थों की श्रेणी में आयेंगे जो वेदानुकूल होंगे। वेद विरुद्ध स्मृतियाँ या ग्रन्थ धर्म ग्रन्थ नहीं हैं। महाराज मनु धर्म के दस लक्षण 'स्मृति' में इस प्रकार लिखते हैं-

धृतिःक्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्यासत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्॥

महर्षि दयानन्द ने 'संस्कार विधि' में इस श्लोक को उद्धृत करके वहाँ अहिंसा को भी धर्म का लक्षण मानकर धर्म के ग्यारह लक्षण माने हैं-

1. अहिंसा- किसी से वैर बुद्धि करके उसके अनिष्ट में कभी न बर्तना।

2. धृति- सुख-दु:ख, हानि-लाभ में व्याकुल होकर धर्म को न छोड़ना, किन्तु धैर्य से धर्म ही में स्थिर रहना।

3. क्षमा- निन्दास्तुति, मानापमान को सहन करके धर्म ही करना।

4. दम- मन को अधर्म से सदा हटाकर धर्म में ही प्रवृत्त करना।

5. अस्तेयम्- मन, कर्म, वचन से अन्याय और अधर्म से पराये द्रव्य का स्वीकार न करना।

6. शौचम्- रागद्वेष त्याग से आत्मा और मन को पवित्र रखना तथा जलादि से शरीर को शुद्ध रखना।

7. इन्द्रियनिग्रह:- श्रोत्रादि बाह्यइन्द्रियों को अधर्म से हटाकर धर्म ही में चलाना।

8. धी- वेदादि सत्य विद्या, ब्रह्मचर्य, सत्संग करने, कुसंग-दुर्व्यसन मद्यपानादि त्याग से बुद्धि को सदा बढ़ाते रहना।

9. विद्या- जिससे भूमि से लेकर परमेश्वर पर्यन्त यथार्थ बोध होता है उस विद्या को प्राप्त करना।

10. सत्यम्- सत्य मानना, सत्य बोलना, सत्य करना।

www.thearyasamaj.org

11. अक्रोध- क्रोधादि दोषों को छोड़कर शान्त्यादि गुणों को ग्रहण करना धर्म कहाता है। महर्षि पतंजलि 'योगदर्शन' में उपरोक्त लक्षणों को योग के अंगों यम और नियम में रखते हैं। इनके बिना योग साधना नहीं की जा सकती।

यम- अहिंसासत्यास्तेयब्रह्मचर्यपरिग्रहा यमाः। (यो० द० 2/30)

अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, अपरिग्रह से पाँच यम हैं।

नियम- शौचसन्तोषतपः स्वाध्यायेश्वरप्रणिधानानि नियमाः।

शौच, सन्तोष, तप, स्वाध्याय, ईश्वर प्रणिधान ये पाँच नियम हैं।

महर्षि अगस्त इन लक्षणों को ही तीर्थ कहते हैं

सत्यं तीर्थं क्षमा तीर्थं तीर्थमिन्द्रिय निग्रहः।
सर्वभूत दयातीर्थं तीर्थमार्जवमेव च॥
दानं तीर्थं दमस्तीर्थं सन्तोषस्तीर्थमुच्यते।
ब्रह्मचर्यं परं तीर्थं तीर्थं च प्रियवादिता॥
ज्ञानं तीर्थं धृतिस्तीर्थं तपस्तीर्थमुदाहृतम्।
तीर्थानामपि तत्तीर्थं विशुद्धिर्मनसः नरा॥
न जल्पाप्लुतः देहस्य स्नान मित्य भिधीयते।
स स्नातो यो दमस्नातः शुद्धि मनोबलः॥

काशीखण्ड 3/24-32

सत्य तीर्थ है, क्षमा तीर्थ है, इन्द्रिय संयम तीर्थ है, सब प्राणियों के प्रति दया तीर्थ है, सरलता, दान, मन का दमन, सन्तोष, ब्रह्मचर्य, प्रिय बोलना भी तीर्थ है। ज्ञान, धृति और तपस्या यह सब तीर्थ है इनमें ब्रह्मचर्य परम तीर्थ है, मन की विशुद्धि तीर्थों का भी तीर्थ है, जल में डुबकी लगाने का नाम ही स्नान नहीं है, जिसने इन्द्रिय संयम रूप स्नान किया है वही स्नान है और जिसका चित्त शुद्ध हो गया है वही पवित्र है।

समाज शास्त्र में इन लक्षणों को मानव मूल्य कहा है अर्थात् यदि व्यक्ति इन लक्षणों को अपने जीवन में धारण करता है तो वह मूल्यवान हो जाता है। प्रसिद्ध हो जाता है, मान सम्मान को प्राप्त करता है। सत्य, अहिंसा, धैर्य, परोपकार, सन्तोष, विद्या, अस्तेय, अक्रोध, समय-पालन, प्रेम, उत्साह, निर्भीकता, संयम, पवित्रता आदि मानव मूल्य हैं।

-: अधर्म के लक्षण :-

महाराज मनु ने अधर्म के भी दस लक्षण लिखे हैं-

परद्रव्येषु अभिध्यानम, मनसा अनिष्टचिन्तनम्।
वितथ अभिनिवेशश्च, त्रिविधं कर्म मानसम्॥

(मनु० 12/5)

मानसिक कर्मों में से तीन मुख्य अधर्म हैं- परद्रव्य हरण अथवा चोरी का विचार, लोगों का बुरा चिन्तन करना, मन में द्वेष करना, ईर्ष्या करना, मिथ्या निश्चय करना।

पारुष्यम् अनृतं चैव, पैशुन्यं चापि सर्वशः।
असम्बद्ध प्रलापश्च, वाङ्मयं स्याच्चतुर्विधम्॥

(मनु० 12/6)

वाचिक अधर्म चार हैं- कठोर भाषण

www.thearyasamaj.org

(सब समय पर, सब ठौर मृदुभाषण करना यह मनुष्यों को उचित है) किसी अन्धे मनुष्य को ओ अन्धे! ऐसा कहकर पुकारना निःसन्देह सत्य है परन्तु कठोर होने से अधर्म है, असत्य बोलना, पैशुन्य अर्थात् चुगली करना, असम्बद्ध प्रलाप अर्थात् जानबूझकर (लांछन) बात को उड़ाना।

अदत्तानाम उपदानं, हिंसा चैवाविधानतः।
परदारोपसेवा च, शारीरं त्रिविधं स्मृतम् ॥

(मनु० 12/7)

शारीरिक अधर्म तीन हैं- चोरी करना, हिंसा (क्रूर कर्म), व्यभिचार।

प्रश्न तृतीय उपस्थित होता है, यदि मनुष्य स्मृति आदि धर्म ग्रन्थों को न पढ़ सके तो धर्म का ज्ञान कैसे होगा? मनुष्य स्मृति आदि धर्म ग्रन्थों को न पढ़ सकें तो **'आचारश्चैवं साधूनाम्)** साधुओं के आचरण से धर्म की जानकारी करके अपने आचरण को ठीक करें। उपरोक्त कथन पर आज समाज में देखने पर बड़ा विचित्र सा दृश्य सामने आता है। आज साधु कहलाने वाले व्यक्तियों के आचरण बड़े ही गन्दे पाये जाते हैं तथा इनको आपस में लड़ते देखा जाता है। चोरी, डकैती, व्यभिचार, रिश्वतखोरी, तस्करी आदि कार्यों में लिप्त पाये जाने वाले साधुवेषधारियों का आचरण अपनाने योग्य है क्या? साधु कहलाने वाले आपस में लड़ते हैं। क्या धर्म लड़ना सिखाता है? किसकी मानें-

◆ एक कहता है कि जीवों पर दया करना धर्म है जबकि दूसरा धर्म के नाम पर निरीह पशुओं की हत्या कर देता है।

◆ एक कहता है कि परायी स्त्री को माँ, बहिन, बेटी के समान समझो जबकि दूसरा कहता है कि हमारे धर्म (सम्प्रदाय) को न मानने वालों की स्त्रियों का अपहरण करो।

◆ एक कहता है कि पराये धन को मिट्टी के डेले के समान समझो जबकि दूसरा धर्म के नाम पर लूट कराता है और लूट को पवित्र कहता है।

◆ एक कहता है कि परमात्मा सभी को न्याय करके कर्मों को फल देता है जबकि दूसरा कहता है कि परमात्मा केवल हमारे धर्म (सम्प्रदाय) के व्यक्तियों पर ही दया करता है दूसरे धर्म के व्यक्तियों पर दया नहीं करता।

◆ एक कहता है कि आत्मा अमर है जबकि दूसरा कहता है कि आत्मा शरीर के साथ ही मर जाता है।

◆ एक कहता है कि जो जैसा करेगा वैसा फल प्राप्त करेगी जबकि दूसरा पाप से बचने के सरल प्रलोभन दे रहा है।

◆ एक कहता है कि परिवार के सदस्यों को आपस में मिल कर रहना धर्म है जबकि दूसरा तन्त्र-मन्त्र-यन्त्र का जाल बिछाकर परिवार के

www.thearyasamaj.org

सदस्यों को आपस में लड़ा देता है, पड़ोसियों को आपस में लड़ा देता है।

◆ किसके कथन को सत्य मानें क्योंकि दोनों ही स्वयं को धर्म का प्रचारक, रक्षक, पोषक (ठकेदार) कहते हैं।

उपरोक्त शंकाओं का समाधान तो साधु शब्द से ही हो जाता है क्योंकि श्रेष्ठ अर्थात् वेदानुसार आचरण करने वाले व्यक्ति को ही साधु कहते हैं और उनका ही आचरण अपनाने के लिए महाराज मनु कहते हैं। नकली साधुओं ने संसार में वैचारिक प्रदूषण किया है जिससे ही सब समस्यायें उत्पन्न हुई हैं।

प्रश्न चतुर्थ उपस्थित होता है कि साधुओं के न मिलने पर धर्म का ज्ञान कैसे होगा? इस प्रश्न के उत्तर में महाराज मनु का कहना है कि **(आत्मनस्तुष्टिः)** आत्मा की संतुष्टि जिन कार्यों से होती है वे धर्म होते हैं। ऐसा कहने पर फिर शंकायें होती हैं-

इस प्रकार तो व्यक्तियों की संख्या के अनुसार आत्मा के प्रिय सन्तुष्टि के कार्य भी पृथक-पृथक हो जायेंगे, क्या यह सब धर्म होगा?

इसी प्रकार दुष्ट संस्कारी, राक्षस संस्कारी, तमोगुणी प्राणी हैं, बाल्यकाल से ही जो जीव हत्या, मांस भक्षण, आदि कार्य करते आ रहे हैं उनमें इन कार्यों के प्रति भय, शंका, तथा लज्जा की अनुभूति नहीं होती है। क्या उनकी आत्मा के प्रिय को धर्म माना जायेगा? जैसे कोई व्यक्ति सन्ध्योपासना, अग्निहोत्र, विद्या प्राप्ति, शुद्धि और कर्तव्य पालन नहीं करता और अतीन्द्रियासक्ति, अन्धविश्वास, अन्धमान्यता आदि से ग्रस्त है तो वह चाहेगा कि मैं इन सब बातों के सन्दर्भ में किसी से कुछ नहीं कहता तो दूसरे भी मुझसे कुछ न कहें। दूसरों के कहने पर वह पीड़ा अनुभव करेगा, क्या उसकी आत्मा की संतुष्टि धर्म है?

इन आपत्तियों के होने पर यह कहा जा सकता है कि सभी की आत्मा प्रिय संतुष्टि करने वाला कार्य धर्म नहीं होता अपितु सद्गुण सम्पन्न साधु पुण्यात्मा विद्वानों की आत्मा के प्रिय कार्य ही धर्म हैं अर्थात् जो वेदानुकूल आचरण करते हैं उन्हीं की आत्मा की संतुष्टि के कार्य धर्म कहलाते हैं। महर्षि दयानन्द सरस्वती सत्यार्थ प्रकाश की भूमिका में लिखते हैं- **" मनुष्य का आत्मा सत्याऽसत्य का जानने वाला है तथापि अपने प्रयोजन की सिद्धि, हठ, दुराग्रह और अविद्यादि दोषों से सत्य को छोड़ असत्य में झुक जाता है।'** अर्थात् जो व्यक्ति स्वार्थी, हठी, दुराग्रही एवं अविद्वान है उसकी आत्मा का प्रिय धर्म नहीं है अपितु जो परोपकारी, विद्वान् है उसी की आत्मा की संतुष्टि धर्म है। व्यावहारिक कार्यों के लिए

www.thearyasamaj.org

महर्षि पतंजलि योग दर्शन में लिखते हैं- जिन कार्यों के करने से आत्मा में भय, शंका तथा लज्जा होती है वे कार्य अधर्म होते हैं, उन्हें नहीं करना चाहिए।

महात्मा चाणक्य ने कहा है-

आत्मवत् सर्वभूतानि यः पश्यति सः पश्यति।

(चा० नी० 12/13)

जो अपनी आत्मा की तरह सभी प्राणियों की आत्मा को देखता है वह सही देखता है। महर्षि व्यास ने कहा-

श्रूयतां धर्म सर्वस्व श्रुत्वा चैवावधार्यतां।
आत्मानः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।।

सुनो धर्म सर्वस्व और सुनकर धारण करलो, अपनी आत्मा के प्रतिकूल किसी के साथ आचरण मत करो। जैसा अपने लिए चाहते हो वैसा दूसरों के लिए करो यही धर्म है अर्थात् हम जैसा-जैसा अपने लिए चाहते हैं वैसा-वैसा ही व्यवहार दूसरों के साथ करें, मैं चाहता हूँ कि सब मेरा सम्मान करें तो मुझे भी सबका सम्मान करना चाहिए। मैं चाहता हूँ कि मेरी उन्नति होती रहे, मेरी उन्नति में कोई बाधक न बने तो मैं भी किसी की उन्नति में बाधक न बनूँ। मैं चाहता हूँ कि मेरा जीवन दुःख रहित हो तो मुझे भी चाहिए कि मैं किसी को दुःख न दूँ।

चाहता है खैर अपनी काट गर्दन और की,
ऐसी बातों से सजन मन को लगाना छोड़ दे।
इस मुबारक पेट में कबरें बनाना छोड़ दे।।

महर्षि दयानन्द सरस्वती ने उसी को मनुष्य कहा है जो कि आत्मानुसार वर्ते- "मनुष्य उसी को कहना जो मननशील होकर स्वात्मवत् अन्य के सुख-दुःख और हानि-लाभ को समझे। अन्यायकारी बलवान से भी न डरे और धर्मात्मा निर्बल से भी डरता रहे। इतना ही नहीं किन्तु अपने सर्व सामर्थ्य से धर्मात्माओं की, चाहे वे महा अनाथ, निर्बल और गुण रहित क्यों न हों उनकी रक्षा, उन्नति प्रियाचरण और अधर्मी चाहे चक्रवर्ती, सनाथ, महाबलवान और गुणवान भी हो तथापि उसका नाश, अवनति और अप्रियाचरण सदा किया करे अर्थात् जहाँ तक हो सके वहाँ तक अन्यायकारियों के बल की हानि और न्यायकारियों के बल की उन्नति सर्वदा करे, इस काम में चाहे उसको कितना ही दारुण दुःख प्राप्त हो, चाहे प्राण भी चले जायें, परन्तु इस मनुष्य रूपी धर्म से पृथक कभी न होवे।" ब्रह्मा से लेकर दयानन्द पर्यन्त ऋषियों ने जो भी सन्देश दिया है वह वेद का ही है। उपरोक्त आत्मवत व्यवहार का चिन्तन वेद में इस प्रकार दिया है-

यजुर्वेद में आत्मवत व्यवहार करने का ही उपदेश है-

यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानतः।
तत्र को मोहः कः शोकः एकत्वमनुपश्यतः।।

(यजु० 40/3)

हे मनुष्यो! जिस परमात्मा, ज्ञान, विज्ञान

www.thearyasamaj.org

वा धर्म में विशेषकर ध्यान दृष्टि से देखते हुए को सब प्राणिमात्र अपने तुल्य ही सुख-दुःख वाले होते हैं उस परमात्मा आदि में अद्वितीय भाव को अनुकूल योगाभ्यास से देखते हुए यागीजन को कौन मूढावस्था और कौन शोक वा क्लेश होता है अर्थात् कुछ भी नहीं।

भावार्थ- जो विद्वान, संन्यासी लोग परमात्मा के सहचारी प्राणिमात्र को अपने आत्मा के तुल्य जानते हैं अर्थात् जैसे अपना हित चाहते हैं वैसे ही अन्यों में भी वर्तते हैं, एक अद्वितीय परमेश्वर के शरण को प्राप्त होते हैं उनको मोह, शोक और लोभादि कदाचित् प्राप्त नहीं होते और जो लोग अपने आत्मा को यथावत् जानकर परमात्मा को जानते हैं वे सदा सुखी होते हैं

यजुर्वेद में आत्मा के विरुद्ध आचरण करने वालों की गति का वर्णन किया है-

असुर्या नाम ते लोका अन्धेन तमसावृताः।
ताँस्ते प्रेत्यापि गच्छन्ति ये के चात्महनोजनाः॥

(यजु० 40/3)

हो सकते और जो आत्मा मन और वाणी और कर्म से निष्कपट एकसा आचरण करते हैं सो ही आर्य सौभाग्यवान सब जगत को पवित्र करते हुए इस लोक और परलोक में अतुल सुख भोगते हैं। प्रस्तुत विवरण से स्पष्ट है कि धर्म का यथार्थ ज्ञान हमें वेद से ही हो सकता है। अन्य किसी मार्ग से नहीं। अतः हमें वेद में वर्णित आचार संहिता का पालन करना चाहिए।

वेद सब सत्य विद्याओं का पुस्तक है (महर्षि दयानन्द)। वेद ही अनन्त ज्ञान का भण्डार है। (**अनन्ता वै वेदाः** -महर्षि याज्ञवल्क्य) वेद से महान कोई शास्त्र नहीं है (**नास्ति वेदात् परं शास्त्रम्**- महर्षि अत्रि)। जो वेद की निन्दा करता है वह ही नास्तिक कहलाता है (**नास्तिको वेद निन्दकः**-मनु)। वेद को पढ़ें-पढ़ायें, सुनें-सुनायें, प्राप्त ज्ञान को जीवन में अपनायें तभी मानव जीवन सफल होगा।

हे प्राणस्वरूप दुःखहर्ता, सर्वव्यापक आनन्द के देनेवाले प्रभो! आप सर्वज्ञ और सकल जगत् के उत्पादक हैं। हम आपके उस पूजनीय पापनाशक स्वरूप तेज का ध्यान करते हैं जो हमारी बुद्धियों को प्रकाशित करता है।

हे पिता! आपसे हमारी बुद्धि कदापि विमुख न हो। आप हमारी बुद्धियों में सदैव प्रकाशित रहें और हमारी बुद्धियों को सत्कर्मों में प्रेरित करें, ऐसी प्रार्थना हैं॥

www.thearyasamaj.org

"आर्य समाज को राजनीति में आना चाहिए था"

-खुशहाल चन्द आर्य, कोलकाता

यह तो सर्वविदित है कि देश को स्वतंत्र करवाने में आर्य समाज का बहुत बड़ा हाथ रहा है। स्वतंत्रता दिलाने में दो विचार धाराओं के व्यक्तियों ने काम किया है। एक धारा थी क्रान्तिकारियों की हिंसा का रास्ता। दूसरी धारा थी महात्मा गाँधी की अहिंसा का रास्ता। आर्य समाज ने इन दोनों धाराओं में ही बढ़-चढ़कर भाग लिया था। वैसे तो महर्षि दयानन्द द्वारा लिखे सत्यार्थ प्रकाश में विदेशी राजा चाहे माता-पिता के समान अच्छा व शुभचिन्तक क्यों न हो फिर भी स्वदेशी राजा के समान नहीं हो सकता। इसलिए हर राष्ट्र को स्वतन्त्र रहना उसका अपना जन्मसिद्ध अधिकार है। इस भावना से सभी क्रान्तिकारी प्रेरित व प्रभावित थे और देश के लिए अपना जीवन समर्पित करने के लिए उद्यत थे। उनमें भी सरदार भगत सिंह जिसका दादा अर्जुन सिंह पक्का आर्यसमाजी था, उसने अपना यज्ञोपवीत संस्कार महर्षि दयानन्द के कर-कमलों से करवाया था और भगतसिंह का यज्ञोपवीत संस्कार भी आर्य समाज के प्रसिद्ध उपदेशक पं० लोकनाथ तर्क वाचस्पति से करवाया था। भगत सिंह की प्रारम्भिक शिक्षा डी.ए.वी. कॉलेज, लाहौर तथा उसके पश्चात् नेशनल कॉलेज, लाहौर से हुई, जहाँ भाई परमानन्द तथा पं० जयचन्द्र विद्यालंकार आदि आर्य प्राध्यापकों से उन्हें देशभक्ति की दीक्षा मिली। रामप्रसाद विस्मिल एक पक्के आर्य समाजी थे जिन्होंने आर्य संन्यासी स्वामी सोमदेव जी से प्रेरणा पाकर ही क्रान्तिकारी बने। वह हवन करके ही भोजन करते थे। काकोरी काण्ड में मृत्यु का आलिंगन करने से कुछ दिन पूर्व ही अपने कारागार की कोठरी में बैठकर अपनी आत्मकथा लिखी। इसमें विस्मिल ने स्पष्ट स्वीकार किया है कि उन्हें स्वदेश हेतु समर्पित होने की भावना आर्य समाज सेही प्राप्त हुई। फाँसी के तख्त पर चढ़ते समय विस्मिल ने 'ओ३म् विश्वानिदेव' आदि आठ स्तुति प्रार्थोपासना के मन्त्रों का उच्चारण किया था। भाई परमानन्द एक पक्के आर्य समाजी थे और आर्य समाज के प्रचारक व डी.ए.वी. कॉलेज के प्राध्यापक भी रह चुके थे। वे पक्का क्रान्तिकारी भी थे, विदेशों में उन्होंने क्रान्ति का बिगुल भी बजाया था। बाद में उसे कालापानी की सजा भी

www.thearyasamaj.org

मिली। भाई हरदयाल एम.ए. भी एक पक्के आर्य समाजी थे, जिन्होंने इंग्लैण्ड और अमेरिका में जाकर क्रान्तिकारी गतिविधियों को क्रियान्वित किया। भाई बालमुकुन्द जो भाई परमानन्द के चचेरे भाई थे, जिन्हें लार्ड हर्डिंग बम केश (1914) में फांसी की सजा हुई। इनके साथ ही मास्टर अमीरचन्द व अवध बिहारी को भी फांसी मिली थी। ये दोनों भी पक्के आर्य समाजी थे। पं० सोहनलाल पाठक जो अमृतसर के निवासी व दृढ़ आर्य समाजी थे। ये लाला हरदयाल की प्रेरणा से क्रान्तिकारी बने और फांसी पर चढ़ाये गये। पं० गेंदामल दीक्षित जो मैनपुरी षड़यन्त्र में पकड़े गये। वे पक्के आर्य समाजी थे और जीवन भर क्रान्तिकारी पथ पर चलते रहे । अन्त में काफी कमजोर होकर बीमार हो गए और गुजर गये। पं० श्याम कृष्ण वर्मा, जो महर्षि के सुयोग्य शिष्य थे और उनके कहने से ही लन्दन गये और वहाँ ऑक्सफोर्ड युनिर्वसिटी में संस्कृत के प्राध्यापक बने और इन्होंने इण्डिया हाउस की स्थापना की जो भारतीय क्रान्तिकारियों का कार्यक्षेत्र बना रहा। वहीं से सभी क्रान्तिकारी गतिविधियाँ चलती रही। इन्हीं गतिविधियों के कारण ही श्यामजी कृष्ण वर्मा को लन्दन छोड़कर फ्रांस जाना पड़ा और वहाँ से वे स्वीटजरलैण्ड चले गये, पर पूरी आयु क्रान्तिकारी गतिविधियों में ही संलग्न रहे। इनको क्रान्तिकारियों का सम्राट भी कहा जाता है। इन्होने फ्रांस जाने से पहले इण्डिया हाउस का पूरा काम वीर सावरकर के जिम्मे कर दिया था और सावरकर ने पूरी जिम्मेवारी से सम्भाला। भारत का कोई भी नेता इंग्लैण्ड जाता था तो वह इण्डिया हाउस में जाकर वीर सावरकर से जरूर मिलता था। अफ्रीका से महात्मा गांधी यहाँ आये थे, तब वे भी इण्डिया हाउस में सावरकाजी से मिलने आये थे, पर विचारों की भिन्नता बनी रही। लाला लाजपत राय, भाई हरदयाल, भाई परमानन्द आदि यहाँ बराबर आते रहते थे। मदनलाल धींगड़ा ने कर्जल वायली जो क्रान्तिकारियों पर अत्याचार करने वालों को प्रोत्साहन देता था और सरदार उधम सिंह ने सर माइकल ओ डायर जिसने जलियाँवाले बाग में गोली चलाने के लिए जनरल डायर को धन्यवाद दिया था, इन दोनों को इन्होंने इण्डिया हाउस में रहते हुए ही मारा था। भारत के क्रान्तिकारियों के सम्बन्ध इण्डिया हाउस से बने रहते थे और सावरकर उनको हथियार आदि सामान भेजते रहते थे। सन् 1857 की क्रान्ति को जहाँ अंगेजों ने सेना उपद्रव की संज्ञा दी थी, उसी को सावरकरजी ने स्वतंत्रता संग्राम बताकर उसके ऊपर एक पुस्तक लिखी

www.thearyasamaj.org

थी। गोरी सरकार ने उस पुस्तक पर छपते ही प्रतिबन्ध लगा दिया था, परन्तु सावरकर ने उस पुस्तक को गुप्त रूप से भारत में भगत सिंह के पास भेज दी थी जिससे क्रान्तिकारियों को बड़ी प्रेरणा मिली और उसी पर मुकदमा बनाकर अंग्रेजों ने वीर सावरकर को काला पानी की सजा सुनाई और उसे अण्डमान की काल कोठरी में रखकर सावरकर के ऊपर अमानवीय अत्याचार ढाए। पर सावरकर कभी भी अत्याचारों से भयभीत होकर विचलित नहीं हुए।

दूसरा पक्ष जो गाँधी जी का अहिंसा था, उसमें भी लाला लाजपतराय, स्वामी श्रद्धानन्द जैसे पक्के आर्यसमाजियों ने अन्दोलनों में खूब बढ़-चढ़ कर भाग लिया था। सन् 1885 में स्थापित भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस को आर्यसमाज ने पर्याप्त सहयोग प्रदान किया। सन् 1888 में इलाहाबाद अधिवेशन में सम्मिलित होने वाले आर्यों में प्रमुख लाला लाजपतराय और लाला मुरलीधर थे। सन् 1889 में लाहौर की सारी व्यवस्था आर्य नेता लाला मूलराज तथा महाशय जायसी राम ने की थी। महात्मा गाँधी जब दक्षिण अफ्रीका के कार्यों को समाप्त कर भारत में आये तो भारत में उन्हें आर्यों द्वारा सक्रिय सहयोग और समर्थन प्राप्त हुआ। देश के लाखों आर्य समाजी गाँधी द्वारा संचालित सविनय अवज्ञा व असहयोग आदि आन्दोलनों में सम्मिलित हुए तथा उन्होंने महात्मा गाँधी के सत्य, अहिंसा आदि सिद्धान्तों को स्वीकर करते हुए स्वदेशी का व्रत धारण किया। विदेशी वस्त्रों का बहिष्कार नशा निवारण, दलितोद्धार, नारी शिक्षा, शराब बंदी, गो रक्षा आदि के रचनात्मक कार्यों में भी आर्य समाजी किसी से पीछे नहीं रहे। इस प्रकार स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए हजारों आर्यों ने कारागार की यातनाएं तथा अन्य प्रकार के कष्ट सहकर आजादी का पथ प्रशस्त किया। लाला लाजपतराय और स्वामी श्रद्धानन्द के भारतीय स्वतंत्रता संग्राम में एक महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। पंजाब में स्वामी दयानन्द ने सीधी प्रेरणा प्राप्त कर लाला साँईदास, लाला लाजपत राय तथा उनके अपूर्व त्याग ने उन्हें ''बाल, लाल, पाल'' की वृहत् त्रयी में स्थान दिलाया। लालजी की राजनैतिक प्रवृत्तियों का सूत्रपात उनकी प्रसिद्ध रावलपिण्डी यात्रा से माना जा सकता है जिसके कारण उन्हें गिरफ्तार कर माँडले जेल में बन्दी के रूप में रखा गया। इसी समय सरदार अजीत सिंह जेल से रिहा हो कर सरकार की नजरों से बचकर अफगानिस्तान के रास्ते विदेश चला गया। इधर लालजी साइमन कमीशन के विरोध में प्रदर्शन करते हुए

www.thearyasamaj.org

लालाजी ने अपनी पीठ पर गोरी पुलिस के डंडों के प्रहार झेले जो अन्ततः ब्रिटिश शासन के लिए ताबूत की कील के तुल्य साबित हुए। लालाजी की मृत्यु का बदला लेने के लिए भगत सिंह ने अंग्रेज सार्जेण्ट साण्डर्स का वध किया था। लालाजी द्वारा स्थापित लोक सेवक संस्थान के माध्यम से देश सेवा को अपने जीवन का व्रत बनाने वालों में श्री पुरुषोत्तम दास टण्डन, लालबहादुर शास्त्री व श्री अलगू राम शास्त्री आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। गाँधीजी जब अफ्रीका से भारत में आये तो सबसे पहले वे स्वामी श्रद्धानन्द से मिलने गुरुकुल काँगड़ी गये और वहीं पर स्वामीजी ने गाँधीजी को महात्मा लगाकर सम्बोधित किया तभी से सभी लोग गाँधीजी को महात्मा गाँधी कहने लगे। गाँधी जी स्वामी श्रद्धानन्द को अपना भाई मानते थे, इसलिए स्वामीजी गाँधीजी के आह्वान पर काँग्रेस में आये। सन् 1919 में लाहौर के अधिवेशन में उन्होंने अपना स्वागत भाषण हिन्दी में दिया। यह काँग्रेस के इतिहास में एक अनोखी घटना थी। रौलट एक्ट के विरोध में दिल्ली की जनता का नेतृत्व करते हुए इस निर्भीक सन्यासी ने अपनी छाती पर संगीनों का वार झेलने का जो साहस प्रदर्शित किया, वह हमारे स्वतन्त्रता संग्राम के इतिहास का एक ज्वलन्त उदाहरण है।

पट्टाभिसितारमैया जो पक्का काँग्रेसी थे और गाँधीजी का प्रिय था जिसके लिए सुभाष बाबू से हारने के बाद कहा था कि पट्टाभि सीतारमैया की हार मेरी हार है। उसी ने काँग्रेस का इतिहास लिखा है, जिसमें लिखा है सन् 1942 की आजादी के आन्दोलन में जेलों में 75 प्रतिशत आर्य समाजी ही थे जो नित्य हवन करके ही भोजन करते थे। देश की आजादी की लड़ाई में जितने भी आर्य समाज के भजनोपदेशक थे, आर्य समाज के जितने भी मन्दिर थे वे क्रान्तिकारियों के आश्रय स्थल थे जिनमें बैठकर वे भविष्य की योजना बनाते थे। आर्य समाज कलकत्ता को भी यह सौभाग्य प्राप्त हुआ था जब भगतसिंह संसद में बम फेंकने के बाद दुर्गा भाभी के साथ गुप्त रूप से कलकत्ता आये तो, तब कुछ दिनों तक भगत सिंह आर्य समाज कलकत्ता में ठहरकर बंगाल के क्रान्तिकारियों से मिले थे। इस प्रकार हम देखते हैं कि आर्य समाज ने क्रान्तिकारियों को तथा गाँधीजी को इतना अधिक साथ दिया था जिसके कारण सभी आन्दोलन सफल हुए।

दु:ख की बात है कि आर्य समाजियों द्वारा इतना अधिक बलिदान देने के बाद भी, जब भारत स्वतन्त्र हुआ तो हमारे शीर्ष नेताओं ने

www.thearyasamaj.org

दूरदर्शियता का परिचय न देकर यह कहा कि आर्य समाज तो एक धार्मिक तथा सामाजिक संस्था है, उसको राजनीति से क्या लेना-देना और शासन करने से अलग हो गये। यदि आर्य समाज आजादी मिलने के बाद शासन के साथ रहता और अपने आर्य समाजी भाइयों को जिन्होंने आजादी की लड़ाई में अपने जीवन की आहुति दी थी उनके बेटे-पोतों को एम.एल.ए. व एम.पी. बना कर भेजते और शासन के हिस्सेदारी रखते तो आज देश की जो दयनीय व सोचनीय दशा हो रही है, वह नहीं होती। आज तो गऊमाता को काटा जा रहा है। वह नहीं काटी जाती यानि गो-हत्या पर पूर्ण प्रतिबन्ध होता। आज जो देश में पश्चिमी शिक्षा व सभ्यता जिस गति से बढ़ रही है, वह नहीं बढ़ती और देश में गुरुकुल, संस्कृत पाठशालाएँ तथा हिन्दी माध्यम से चलने वाले स्कूलों कॉलेजों की अधिकता होती और देश के नवयुवक धार्मिक और चरित्रवान बनते तो देश में आज जितनी बेईमानी, भ्रष्टाचार, चरित्रहीनता, लूट, खसौट, रिश्वतखोरी, मंहगाई, बेरोजगारी, गुण्डों-बदमाशों का प्रभुत्व इतना अधिक बढ़ा हुआ है जिससे आम जनता दु:खी ही नहीं बल्कि त्राही! त्राहि!! त्राहि!!! कर रही है, वह दु:खी न होकर सुख व शान्ति की नींद सोती। यह हमारे आर्य समाज के शीर्ष नेताओं की भूल है, जिसका दण्ड आज सभी देशवासी भुगत रहे हैं।

जब स्व० स्वामी इन्द्रवेश व स्वामी अग्निवेश अपने कार्यक्षेत्र में उतरे तो उन्होंने इस बात पर विचार किया था कि यदि हम आर्य राज्य भारत में लाना चाहिते हैं तो हमें राजनीति में आना होगा कारण चाहे कोई भी धर्म हो जब तक उसे राज्य सत्ता का सहारा नहीं मिलता है, तब तक वह नहीं फैल पाता। उदाहरण के रूप में बौद्ध धर्म अपनी मंद गति से चल रहा था तब तक नहीं फैल सका। जैसे ही राजा अशोक ने बौद्ध धर्म को अपना लिया तो कुछ ही समय में यह धर्म चीन, जापान, इण्डोनेशिया, तिब्बत, ब्रह्मा तथा लंका तक के छोटे देशों में भी फैल गया। मुस्लिम और ईसाई धर्म का भी यही इतिहास है। यही विचार करके दोनों वेशों के एक आर्यों का राजनैतिक मंच 'आर्य सभा' के नाम से गठित किया और सन् 1982 के चुनावों में हरियाणा में दो एम.एल.ए. स्वामी अग्निवेश और स्वामी आदित्यवेश बने जिनमें स्वामी अग्निवेश हरियाणा के शिक्षा मन्त्री भी बने और काफी सुधार के काम किए। परन्तु सन् 1974 में जब स्व० जयप्रकाश नारायण ने काँग्रेस के विरोध में बाकी सब पार्टियों को एक मंच पर 'जनता पार्टी' के नाम से आने का आह्वान किया

www.thearyasamaj.org

तब सब पार्टियों के साथ 'आर्य सभा' को भी मिलाना उचित समझा। इसमें किसी का दोष नहीं, यह तो समय की मांग थी। पर दु:ख इस बात की हैं कि 'जनता पार्टी' टूटने पर अन्य पार्टियों ने तो किसी भी दूसरे नामों से अपना अस्तित्व बना लिया, परन्तु आर्य समाज अपनी फूट के कारण अपना कोई भी अस्तित्व नहीं बना सका। आर्य समाज एक धार्मिक व जनकल्याणकारी संस्था हैं, इसे राजनीति में भाग लेना चाहिए, यह एक गलत और भ्रामक प्रचार है। वेदों में आर्यों को चक्रवर्ती राजा बनने तक की आज्ञा है और हमारे देश में आर्य राजा श्रीराम और युधिष्ठिर आदि चक्रवर्ती राजा बने भी हैं। महर्षि दयानन्द का स्वप्न भी यही था कि आर्यों का विश्व में चक्रवर्ती राज्य स्थापित हो। जब हमें वेद और महर्षि दयानन्द ही चक्रवर्ती राजा बनाने की आज्ञा देता है तो हमें राजनीति में भाग क्यों नहीं लेना चाहिए? मेरे विचार से आर्य समाज को राजनीति में भाग अवश्य ही लेना चाहिए। यदि नहीं लेता है तो वह अपने कर्त्तव्य से च्युत होता है।

हमें 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्'' के उद्घोष का ध्यान रखते हुए, वेदों के सिद्धान्तों का प्रचार व प्रसार जितना अधिक कर सकें उतना अधिक करते हुए लोगों को तन, मन, बुद्धि व आत्मा से आर्य बना कर उनको चुनावों में विधायक व सांसद बनाकर विधान सभाओं व संसद में भेजें ताकि आर्यों का ही प्रदेशों व केन्द्र में मन्त्रीमण्डल बन सके तभी भारत में रामराज्य की पुन: स्थापना हो सकेगी। अन्यथा यदि हम आज की कांग्रेस की नीति पर ही चलते रहे तो वह दिन दूर नहीं जब हिन्दू अपने देश में ही अल्पमत में हो जायेगा और हम बैठे-बैठे ही गुलाम हो जायेंगे। इसलिए आर्य समाजियों का यह पावन कर्त्तव्य है कि जब उसने सदैव ही देश की रक्षा की है तो अब क्यों मुख मोड़ता है। उसको चाहिए कि वह सब सच्चे भारतीयों को जो भारत भूमि को ही अपनी मातृ, पितृ तथा पुण्य भूमि मानता है, उन सबको संगठित करके एक 'ओ३म' के झण्डे के नीचे लाकर देश के आर्यों (सच्चे इन्सानों) का राज्य स्थापित करें और भारत भूमि को 'स्वर्गभूमि' बनावे यदि आर्य समाजियों ने यह काम नहीं किया तो फिर पीछे हमें पछताने के अलावा ओर कुछ हाथ नहीं लगेगा। काका हाथरसी ने आर्य समाज के लिए ठीक ही कहा था-

गोरे, भारत नहीं छोड़ते, राजी-राजी।
अगर न देते योग देश के आर्य समाजी॥

●

www.thearyasamaj.org

विजयदशमी पर्व का सांस्कृति महत्त्व

-डॉ0 महेश विद्यालंकार, दिल्ली

भारत कृषि-प्रधान देश है। पर्व यहाँ की सांस्कृतिक चेतना के आधार रहे हैं। कई पर्व फसलों के साथ जुड़े है तो कई पर्व ऋतु-परिवर्तन, ऐतिहासिक, घटनाओं और महापुरुषों के जीवनी से जोड़े गए हैं। पर्व जीवन में उत्साह, उल्लास एवं उमंग का संचार करते है। इन त्योहारों से जीवन और समाज में मेलजोल व भाईचारा आता है। हमारा देश त्योहारों का देश कहलाता है। यहाँ किसी न किसी पर्व का दिन बना ही रहता है। इन पर्वों में देश की धार्मिक, सांस्कृतिक तथा सामाजिक जीवन की झाँकियाँ मिलती हैं।

विजयदशमी पर्व समूचे देश में बड़ी धूमधाम से मनाया जाता है। वैदिक काल से ही इस त्योहार का महत्व व विशेषता रही है। हमारे देश में मुख्य तीन ऋतुएँ होती हैं- सर्दी, गर्मी, वर्षा। वर्षा के कारण नदियाँ बाढ़ से उमड़ पड़ती है। चारों ओर पानी नजर आता है। आने-जाने के मार्ग बन्द हो जाते है। प्राचीन काल में ऐसा होता था। आजकल तो इतने साधन सुविधाएँ उपलब्ध हैं कि वर्षा ऋतु का सामान्य जीवन पर कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। पहले के समय में इतने उन्नत साधन नहीं होते थे। किसान, व्यापारी और यात्री गाड़ी, रथ, नौका आदि साधनों से अपना आवागमन का कार्य चलाते थे। वर्षा के बन्द होते ही शरद ऋतु के आगमन पर व्यापार-यात्रा, कृषिकर्म सब-कुछ आरम्भ हो जाता था। वर्षा ऋतु में गाड़ी, रथ व अन्य साधनों में जो जंग व रुकावट, आ जाती थी, उन अस्त्र-शस्त्रों और साधनों को साफ व सुन्दर बनाया जाता था। यात्रा और व्यापार के लिए वाहनों व साधनों को साफ-सुथरा बनाकर उपयोग के काबिल किया जाता था। सभी अपने-अपने कार्य की तैयारी में लग जाते थे। विजयदशमी के दिन से व्यापार, यात्रा, विजय और यात्रा तथा विदेश-गमन आदि आरम्भ हो जाते थे। लोग व्यापार-यात्रा से पूर्व यज्ञ-अनुष्ठान और पूजा आदि धार्मिक कार्यों को महत्त्व देते थे। परस्पर मिलकर मन-मुटाव दूर करके एक-दूसरे की सफलता के लिए मंगलकामनाएँ करते थे।

विजयदशमी का पर्व क्षत्रियों की विजय का त्यौहार कहलाता है। यह शक्ति-पूजा का पर्व है। शस्त्र-पूजा का विधान शास्त्र-सम्मत रहा है। ''शस्त्रेण रक्षिते राष्ट्रे शास्त्रचर्चा प्रवर्त्तते'' -जिस राष्ट्र में शौर्य,

www.thearyasamaj.org

पराक्रम और वीरता की पूजा होती है, उसी राष्ट्र में शास्त्रों एवं धर्म ग्रन्थों का पठन-पाठन निर्विघ्न रूप से चलता है, इस पर्व का वैदिक स्वरूप ऐसा ही मिलता है। कालान्तर में अनेक रूढ़ियाँ, घटनाएँ और किंवदन्तियों जुड़ती गई। सत्य व यथार्थ प्रेरक रूप छूटता गया।

वर्तमान में जो इस पर्व का रूप-स्वरूप दिखाई देता है, उसमें अनेक आडम्बर, विकृतियाँ और कल्पनाएँ आदि जुड़ गई हैं, जिससे वास्तविकता का बोध होना कठिन हो गया है। आज आम धारणा प्रचलित हैं कि विजयदशमी के अवसर पर श्रीराम द्वारा रावण पर विजय प्राप्त की गयी थी। विद्वानों तथा वाल्मीकि रामायण का इस तिथि पर मतभेद है। श्रीराम का लंका-विजय-यात्रा इसी दिन आरम्भ हुई हो, इसीलिए हम भारतीयों का यह दिन विजय-मुहूर्त बन गया हो। जो भी रहा हो, किन्तु जो आज लोक-प्रचलन चल रहा है, वह बड़ा प्रबल है। इन दिनों नगरों, ग्रामों, और देश-विदेश सर्वत्र रामलीलाओं, देवी-पूजन, धार्मिक अनुष्ठान आदि की धूम मची होती है। कई दिनों तक रामलीला का मंचन होता है। बाल-वृद्ध सभी नर-नारी हर्षोल्लास के साथ सम्मिलित होत हैं। श्रीराम के जीवन-चरित्र और कर्यों का गुण-कीर्तन होता है। सभी बड़ी धूमधाम तथा सज-धज के साथ रावण-बध में भाग लेते हैं। ऐसा हर साल होता है। सवाल यह है कि हमने इस पर्व से जीवन, व्यवहार व संसार के लिए कुछ शिक्षा और प्रेरणा ली है या नहीं? यदि नहीं ली तो यह पर्व मात्ररस्म, रिवाज व परम्परा है, जिसका निर्वाह हो गया। यह आज के मानव तथा समाज की दु:खपुर्ण विडम्बना है कि सभी पर्व, रामलीलाएँ, कृष्णलीलाएँ, धार्मिक कर्म, तीर्थ यात्राएँ आदि मेले का रूप लेते जा रहे हैं। लोग खाने, पीने, घूमने और तमाशा देखने के भाव से इन स्थानों पर जाने लगे हैं। चरित्र-निर्माण, जीवन-सुधार और विचार, प्राप्ति का भाव छूटता जा रहा है। कागज का रावण हर साल जला दिया जाता है परन्तु असली रावण सदा जिन्दा बना रहता है तथा हर साल बढ़ता, फलता-फूलता और फैलता जा रहा है। पहले एक रावण था, आज अनेक रावण गली, मोहल्ले और कदम-कदम पर मिल जायेंगे, जो घात लगाए बैठे है कि कब सीता मिले और हम उठाकर, चुराकर, भगाकर तथा फुसलाकर ले उड़े। इस रावणवृत्ति पर जब तक हम राम-वृत्ति द्वारा विजय प्राप्त नहीं करते, तब तक इस पर्व की महत्त्वपूर्ण सार्थकता सिद्ध नहीं हो सकेगी। श्री राम का सम्पूर्ण जीवन आदर्श, कर्त्तव्य, बुद्धि, प्रेम, त्याग और निर्माण की प्रेरणा

www.thearyasamaj.org

का संदेश देता है। इन्हीं भावों से व्यक्ति, परिवार समाज एवं राष्ट्र उन्नत बनते हैं। यहीं इस पर्व की मूल चेतना है।

विजयदशमी के साथ के नवरात्र-व्रत, उपवास, पूजा-पाठ, अनुष्ठान आदि का सम्बन्ध जोड़ा जाता है। इन क्रियाओं का हमारे जीवन और विचारों पर गहरा प्रभाव पड़ता है। जीवन को असद् वृत्ति से सदवृत्ति की ओर तथा भगवद-भक्ति की ओर लाने के लिए व्रत, पूजा, सत्संग यज्ञ आदि का महत्त्वपूर्ण योगदान है। नवरात्रों के माहात्म्य व फल का पुराण शास्त्रों में विस्तार से चिन्तन किया गया है। मैं यहाँ पर मात्र आयुर्वेदिक दृष्टि से, जो शरीर को निरोग बनाने में सहायक है, उसका जिक्र कर रहा हूँ। इस शरीर में आठ चक्र और नौ द्वार हैं। ऋतु-परिवर्तन के अवसर पर शरीर के नौ द्वारों की स्वच्छता व शुद्धि की प्रेरणा भी इस नवरात्र में छिपी है। नियम यह है कि जहाँ भी मल रुकता है, वहीं रोग उत्पन्न हो जाते हैं। जब भी ऋतु-परिवर्तन होता हे, तभी रोग आ घेरते हैं। यदि शरीर के नौ द्वारों को जल, उपवास फलाहार आदि से स्वच्छ कर लिया जाए तो आने वाली ऋतु में व्यक्ति निरोग रह सकता है। जब ऋतु बदलती है, तभी नवरात्र आते हैं। आयुर्वेद भी यही कहता है कि खान-पान, दिन-चर्या और रहन-सहन के परिवर्तन से आयुपर्यन्त जीवन सुखी रह सकता है। इस नवरात्र पर्व का यह वैज्ञानिक, व्यावहारिक व उपयोगी चिन्तन छूट रहा है। मात्र बाह्य-लोकाचार तथा आडम्बरों तक ही दृष्टि सीमित होती जा रही है।

विजयदशमी पर्व के साथ दुर्गा-पुजा का महोत्सव बड़ी धूम-धाम से मनाया जाता है। बंगाल-प्रान्त में दुर्गा-पूजा बड़े भव्य स्तर पर होती है। बड़े-बड़े पण्डालों में दुर्गा की प्रतिमा का दिव्य आकर्षक रूप प्रदर्शित किया जाता हैं लोग श्रद्धा-भक्ति और उत्साह के साथ पूजा-अर्चना में भाग लेते हैं। दुर्गा के नौ विशेष कार्यों के कारण अनेक नाम प्रचलित हैं। उन नामों व कार्यों की चर्चा न करके मात्र इस पर्व का जीवन और जगत् के लिए जो प्रेरणा और सन्देश है, उसका संक्षेप में चिन्तन रख रहा हूँ। जब भी इस संसार में अन्याय, अत्याचार और राक्षसी वृत्तियाँ बढ़ने लगती हैं, तब उन राक्षसी वृत्तियों का दमन दैवीय शक्ति से ही होना है। उसी दैवी शक्ति का नाम दुर्गा है। दुर्गा का एक अर्थ बुद्धि भी माना गया है। संसार में बुद्धि के बल की प्रार्थना की गई है। चाणक्य कहते हैं, ''परमात्मा तू मेरा सब-कुछ छीन लेना, बुद्धि मत छीनना। बुद्धि मत छीनना। बुद्धि होगी तो मैं

www.thearyasamaj.org

संसार में सब-कुछ प्राप्त कर लूँगा।''

आज लोग दुर्व्यसनों, दुर्गुणों और गन्दे आचार-विचार से अच्छी-भली बुद्धि को खराब कर रहे हैं। यदि मानव अपना और संसार का कल्याण चाहता है तो उसे पाप से पुण्य की ओर, असत्य से सत्य की ओर, राक्षसवृत्ति से दैवी वृत्ति की ओर अपने जीवन को लगाना चाहिए। जो आसुरी भावों और कर्मों की ओर बढ़ते हैं, उनका अन्ततः विनाशकारी पतन होता हैं जो चराचर में व्याप्त शक्ति पर आस्था व श्रद्धा रखकर जीवन-यात्रा चलाते हैं, उनके जीवनों में सुख, शान्ति प्रसन्नता व आनन्द की प्राप्ति होती है। यही इस पर्व की संगति है।

संक्षेप में आज का युग वैज्ञानिक और प्रमाण का युग है। हमारे जो पर्व, व्रत अनुष्ठान और धार्मिक सामाजिक, रीति-रिवाज हैं उनका व्यावहारिक, उपयोगी विज्ञान-सम्मत, बुद्धि अनुकूल जो उज्जवल पक्ष है, जो जीवन और जगत् के लिए उपयोगी है, उसी का पालन करना चाहिए। जो इन पर्वों के पीछे जीवन-सन्देश दिया गया हैं उसके आचरण से ही हमारा जीवन धन्य हो सकता है।

करो वेद प्रचार अमृत बरसेगा।

भारत की दुर्दशा

नक्शा भारत का बदल रहा
दुर्दशा कोई न लख पाता ।
पर कहती सरकार यहाँ की देश
तरक्की है करता ॥

बिकारी छाई है जिससे युवक यहाँ पर भटके,
राष्ट्र प्रगति के कार्य सभी रखे रह जाते लटके।
छदमवेश कुर्सी अराधक माल देश का गटके,
विघटन और आतंकवाद के पग पग पड़ते झटके।
दिन-हीन असहाय मनुज का हाल कहा नहीं जाता।।
पर कहती सरकार यहाँ की देश तरक्की है करता ।।1।।

काश्मीर, आसाम, अरूणाचल, झारखण्ड, मेघालय,
उग्रवाद अपनाये जाते हथकण्डे होते हैं तय।
पाकिस्तानी मंसूबे मे ढाया जाता जहाँ प्रलय,
उद्यम न कोई कर पाता है जिससे हो सौभाग्य उदय।
अंग-अंग को बाँट झगड़ते रक्त पिपासु निर्दयता ।।
पर कहती सरकार यहाँ की देश तरक्की है करता ।।2।।

राम कृष्ण का जो वंशज और जगतगुरू सिरमौर है,
हर ग्राम, शहर और नगर-नगर में गलत नीति का दौर है।
अरि कहरी के समक्ष ही छल-प्रपंच का ठौर है,
अंधकार में कौन किसी का रक्षक त्राता और है।
भाई और भाई में परस्पर युद्ध भयंकर ठनता ।।
पर कहती सरकार यहाँ की देश तरक्की है करता ।।3।।

- संजय सत्यार्थी

www.thearyasamaj.org

सृष्टि में प्रजनन की प्रक्रिया

-डॉ0 सत्यव्रत सिद्धातालंकार

इस लेख में हम बालक के शारीरिक विकास के उस पहलू पर प्रकाश डालेंगे जिससे उसके अंगों में ऐसा-कुछ परिवर्तन होने लगता है कि अव अपने को बच्चा नहीं अनुभव करता, किशोर अनुभव करने लगता है। किशोरावस्था में बालक में अनेंक परिवर्तन होते हैं, परन्तु सबसे बड़ा परिवर्तन उसके उत्पादक अंगों में होता है। यह परिवर्तन पौधे, वनस्पति, कीट, पतंग, पशु, मनुष्य- सभी में होता है। मनुष्य के उत्पादक अंगों के परिवर्तन को समझने के लिए दूसरे प्राणियों में जो परिवर्तन होता हे, उसे समझ लेना आवश्यक है। उसी का वर्णन हम इस अध्याय में करेंगे।

जीवन की सब क्रियाओं को मोटे तौर पर दो भागों में बाँटा जा सकता है- 'शरीर-पोषण' और 'प्रजनन'। 'शरीर-पोषण' एक स्वार्थमयी क्रिया है। खा-पीकर वैयक्तिक उन्नति करने से ही जीवन-शक्ति बनी रह सकती है। जहाँ भी जीवन है, वहाँ यह स्वार्थ पाया ही जाता है। सुदूरवर्ती जंगल के एक कोने में खड़ा हुआ पौधा, हवा से, जल से, पृथिवी से अपने जीवन के लिए आवश्यक प्राण-शक्ति को खींच लेता है। दिन-प्रतिदिन उसमें हरी-हरी कोंपलें निकलती हैं, शाखाएँ, फूटती हैं, वह बढ़ता हुआ वृक्ष बनता चला जाता है। प्रातःकाल पक्षी अपने घोंसलों को छोड़ते हैं, आसमान पार करते हुए मीलों दूर पहूँच आते हैं, साँझ को लौट आते हैं, और अगले दिन फिर दाने की तलाश में निकलने की तैयारी करने लगते हैं। इसी चक्र में उनकी आयु बीत जाती है। जंगल के जानवर हरी घास और ताजे पानी की खोज में निकल पड़ते हैं। जहाँ उन्हें घास के खेत और पानी के तालाब मिल जाते हैं, वहीं वे अपना बसेरा डाल लेते हैं। मनुष्य भी, बचपन से लेकर बुढ़ापे तक रोटी और कपड़े के जटिल प्रश्न को हल करने में ही पसीना बहाता है। इस प्रकार पौधे, पक्षी, पशु तथा मनुष्य अपनी वैयक्तिक सत्ता को मिटने से बचाने के लिए भरसक जद्दोजहद करते हैं।

परन्तु यह कशमकश कबतक चल सकती है? आखिर, मरना हरेक को है। वैयक्तिक जीवन तभी तक है, जबतक जीवित प्राणी जीवन की परिवर्तनशील भिन्न-भिन्न परिस्थितियों पर विजय प्राप्त कर सकता है। जबतक जीवन का स्थितियों पर विजय प्राप्त कर सकता है। जबतक जीवन का पूर्ण विकास

www.thearyasamaj.org

नहीं हो जाता, तबतक व्यक्ति को जीवित रहने के लिए, अपने शारीरिक पोषण के लिए, उन अवस्थाओं से लड़ना पड़ता है, जो जीवन की सतत धारा को रोकनेवाली हों, उसे सुखानेवाली हों। परन्तु यह स्थिति भी कबतक रह सकती है? आखिर, समय आता है, जब चारों तरफ की परिस्थितियों के साथ जीवित-सम्बन्ध स्थापित कर सकना असम्भव के टूट जाने का नाम ही मृत्यु है। ऐसी अवस्था में शरीर-पोषण की स्वार्थमयी क्रिया समाप्त हो जाती है। यदि मनुष्य का यही अन्त होता, तो वह अत्यन्त दुःखमय होता, परन्तु ऐसा नहीं है। परमात्मा ने बुझते हुए दीपक की ज्योति को पूर्ण रूप से सुरक्षित रखने का भी उपाय कर दिया है। उसने एक ऐसा तरीका निकाला है, जिससे एक बार उत्पन्न हुआ जीवन अनन्त काल तक बना रह सकता है।

'शरीर-पोषण' के बाद 'प्रजनन-प्रक्रिया' मनुष्य की सहायता को आ पहुँचती है। इसके द्वारा वैयक्तिक जीवन के नष्ट हो जाने पर भी वह उसे जाति के शरीर में जीता-जागता बना देती है। जब पौधे की वानस्पतिक वृद्धि रुक जाती है, तो उसमें संचरण करनेवाला वही प्राण रम्य, सुगन्धि पुष्पों के रूप में फट निकलता है। उन फूलों से सजातीय वृक्ष उत्पन्न करनेवाले सहस्त्रों बीज तैयार हो जाते हैं। हवा के झोंके से उखड़ता हुआ एक पौधा अपने-जैसे अनेकों की नींव रख जाता है। युवावस्था में, ऋतुकाल में, सब प्राणी अपने-जैसे बच्चे पैदा कर जाते हैं, और उन बच्चों में ही वे प्राणी एक प्रकार से अमर हो जाते हैं। मनुष्य भी मृत्यु के सैकड़ों और सहस्त्रों वर्ष उपरान्त, अपने बच्चों में, पोतों-पड़पोतों में बार-बार पैदा होता है, और अपने क्षीण हुए योवन को भी मानो शाश्वत बना लेता है। इस प्रकार जीवन से उत्कट वैर रखनेवाली मृत्यु का पराजय होता है और जीवन की धारा अखण्डित रूप से प्रवाहित होती रहती है।

जैसा पहले कहा जा चुका है, 'शरीर-पोषण' जीवन की स्वार्थमयी किया है, परन्तु 'प्रजनन' स्वार्थहीन क्रिया है। इसका उद्देश्य युवावस्था में, जिस आयु में शरीर-पोषण और अधिक नहीं हो सकता, शरीर-पोषण करनेवाले तत्त्व से ही सन्तानोत्पत्ति करना हैं जिस प्रकार पौधे की वानस्पतिक वृद्धि हो चुकने पर फूल खिलते हैं, इसी प्रकार जितना 'शरीर-पोषण' हो सकता है, उसके हो चुकने पर, 'प्रजनन' की बारी आती है। उससे पूर्व यह अस्वाभाविक है। 'शरीर-पोषण' का अवश्यम्भावी परिणाम 'प्रजनन' होना चाहिए।

www.thearyasamaj.org

'शरीर-पोषण' के समाप्त होने पर 'प्रजनन' शुरू होना चाहिए। उससे पूर्व शुरू हो जाने पर वह 'शरीर-पोषण' के खर्च पर होगा, उसमें रूकावट डालकर होगा। प्रजनन-प्रक्रिया का उपयोग सिर्फ रूकावट डालकर होगा। प्रजनन-प्रक्रिया का उपयोग सिर्फ सन्तति पैदा करने के लिए करना चाहिए और यह भी तब, जबकि पुरुष की आयु 25 तथा स्त्री की 16 वर्ष की हो, क्योंकि शरीर-रचना के पंडितों के अनुसार इस आयु में पहुँचकर ही दोनों का शारीरिक विकास पूर्ण होता है। जिस प्रकृति ने मनुष्य को 'प्रजनन-शक्ति' दी है, उसका यही नियम है। पौधों और पशु-पक्षियों में इस नियम का अक्षरश: पालन होता है, परन्तु धिक्कार है मनुष्य को, जो सभ्यता और विकास की डींग हाँकता हुआ नहीं थकता, परन्तु पवित्र प्रजनन-शक्ति का दुरुपयोग करके अपने को मनुष्यता के उच्च्व आसन से गिराकर पिशाच बना लेता है और फिर जब समय हाथ से निकल जाता है, भयंकर कुकुत्यों के डरावने परिणाम आँखों के सम्मुख नाचने लगते हैं, तब सिर धुन-धुन कर रोता है।

जीवन का प्रारम्भ

प्रोटोप्लाज्म- जीवन का उद्‌भव बड़ा रहस्यमय है। सर विलियम थॉमसन का विचार था कि इस पृथिवी पर जीवन किसी अन्य नक्षत्र से आ गिरा है। डार्विन का सिद्धान्त है कि वनस्पतियों तथा प्राणियों की उत्पत्ति किसी एक ही मूल-तत्त्व से हुई है। हर्बर्ट स्पेन्सर, हक्सले तथा टिण्डल ने कहा कि चेतनता की उत्पत्ति जड़ से स्वयं हो गई, परन्तु उन्होंने साथ ही यह भी स्वीकार कर लिया कि उनके सिद्धान्त की पुष्टि के लिए उनके पास कोई प्रत्यक्ष प्रमाण न था। जीवन का उद्‌भव सृष्टि के प्रारम्भ में कैसे हुआ, इस प्रश्न पर अबतक कोई निश्चित सम्मति नहीं दी जा सकी। हाँ, उद्‌भव के बाद, जीवन की वृद्धि के प्रश्न को विज्ञान ने खूब हल कर लिया है। वैज्ञानिकों का कथन है कि वानस्पतिक तथा जान्तविक, दोनों जगत् का एकमात्र मूल-आधार 'प्रोटोप्लाज्म' है, जिसे केवल सूक्ष्म-वीक्षण यंत्र की सहायता से देखा जा सकता है। जीवन का मूलभूत यह प्रोटोलाज्म- कललरस-क्या है? प्रोटोप्लाज्म एक पारदर्शक पदार्थ है। यह लसलसा, आधा द्रव और आधा ठोस होता है। इसके सब हिस्से एक ही तत्व से बने होते हैं, यह अखण्ड एकरस होता है। इसमें स्वाभाविक गति होती रहती है। यह गति अनियमित होती है, घड़ी-घड़ी बदलती रहती है। 'प्रोटोप्लाज्म' के भीतर हर समय दो प्रक्रियाएँ होती रहती है। एक

www.thearyasamaj.org

प्रक्रिया से वह जीवन-रहित पदार्थ को अपने अन्दर लेकर जीवन का अंग बना देता है, दूसरी प्रक्रिया से जीवन के अंगीभूत पदार्थ को भीतर से निकालकर जीवन-रहित बना देता है। यही प्रक्रिया 'जीवन' का प्रारम्भ कही जा सकती है।

अमीबा- वानस्पतिक जगत् में जीवन -शक्ति के सर्वतः प्रथम विकास को 'बैक्टीरिया' कहते हैं। जब जीवनी-शक्ति का वही विकास प्राणि-जगत् में प्रकट होता है, तो उसे 'अमीबा' कहते हैं। वानस्पतिक जगत् की इकाई 'बैक्टीरिया' है, प्राणि-जगत् की इकाई 'अमीबा' है। जीवन की इन दोनों इकाइयों का मूल-तत्त्व 'प्रोटोप्लाज्म' ही होता है। अर्थात्, प्रोटोप्लाज्म, जो जीवन का मूलभूत भौतिक तत्त्व है, जब वनस्पति-जगत् का प्रारम्भ करता है, उस समय इसका नाम 'बैक्टीरिया' होता है, और जब वह प्राणि-जगत् का प्रारम्भ करता है, तब इसका नाम 'अमीबा' होता है। 'बैक्टीरिया' तथा 'अमीबा' दोनों प्रोटोप्लाज्म के ही विकास हैं, और क्रमशः स्थावर अर्थात् वनस्पति तथा जंगम अर्थात् कीट, पतंग, पशु तथा मनुष्य के प्रारम्भिक रूप हैं। किसी शान्त तालाब के अन्दर के कीचड़ को लेकर सूक्ष्म-वीक्षण यंत्र के नीचे रखकर देखें, तो पता चलेगा कि कीचड़ में का पदार्थ छोटे-छोटे, गोल-गोल प्रोटोप्लाज्म के मूल-तत्त्व से बना हुआ है। सूक्ष्म निरीक्षण से पता चलेगा कि ये प्रोटोप्लाज्म से बने हुए पदार्थ जीवित कीटाणु हैं। वे हिलते हैं, बढ़ते हैं और भिन्न-भिन्न आकृतियाँ धारण करते हैं। इन्हीं कीटाणुओं को 'अमीबा' कहते हैं। 'अमीबा' की चेष्टाएँ अत्यन्त विचित्र होती हैं। इसका एक हिस्सा बढ़कर मुख बन जाता है, फिर वही आमाशय तथा टाँगों का काम भी करने लगता है। इस कीटाणु के शरीर का कोई अंग निश्चित नहीं होता। अपने शरीर के जिस हिस्से से वह जो कोई भी काम लेना चाहे, ले सकता है।

न्यूक्लिअस- 'अमीबा' के शरीर में एक छोटी गाँठ-सी होती है, जिसें 'न्यूक्लिअस' कहते हैं। यह गाँठ 'अमीबा' के 'प्रोटोप्लाज्म' के भीतर ठहरी हुई नजर आती है। यह जनन-प्रक्रिया में बड़ी आवश्यक है। अमीबा के 'न्यूक्लिअस' वाली गाँठसहित 'प्रोटोप्लाज्म' को अँग्रेजी में 'न्यूक्लियेटेड प्रोटोप्लाज्म' कहते हैं। 'न्यूक्लिअस'- युक्त अर्थात् गाँठवाले प्रोटोप्लाज्म को सूक्ष्म वीक्षण के नीचे रखकर देखने से अनेक नई बातें मालूम होती है। कुछ देर के बाद जब 'अमीबा' निश्चल हो जाता है, उसके 'न्यूक्लिअस' अर्थात् उसकी गाँठ में कुछ आवश्यक परिवर्तन होने प्रारम्भ हो जाते हैं। उस 'न्यूक्लिअस' के बीच में से दो टुकड़े हो जाते हैं

www.thearyasamaj.org

और प्रत्येक टुकड़े के साथ आधा-आधा प्रोटोप्लाज्म भी हो लेता है। वह प्रोटोप्लाज्म न्यूक्लिअस के उस आधे टुकड़े को घेर लेता है। और जहाँ पहले एक 'अमीबा' था, वहाँ अब दो स्वतन्त्र 'अमीबा' तैयार हो जाते हैं। इस प्रकार एक ही 'अमीबा' के दो 'अमीबा' बन जाते हैं। इनमें से प्रत्येक के फिर दो भाग होकर चार 'अमीबा' बन जाते हैं। इस प्रकार शुरू-शुरू का अमीबा अपने व्यक्तित्व को नष्ट करता जाता है और अपने ही शरीर को पहले दो, फिर चार, फिर आठ आदि भागों में विभक्त कर अपनी जाति की भावी सन्तति को जन्म देता जाता है और अपने शरीर के टुकड़े करता-करता अपने जैसे सैकड़ों अमीबा पैदा करता जाता है।

कोष्ठ-विभाजन- हमने अभी पढ़ा कि 'अमीबा' के विकास कम में बीच की गाँठ टूटकर दो भागों में बँटती है, और इस 'न्यूक्लिअस-युक्त प्रोटोप्लाज्म' के वे दो भाग टूटकर अनेक भागों में विभक्त होते जाते हैं। 'अमीबा' से ऊँचे प्राणियों में भी शरीर की रचना का, 'न्यूक्लिअस-युक्त प्रोटोप्लाज्म' से ही, जिसे अंग्रेजी में 'सैल' या हिन्दी में 'कोष्ठ' कहते हैं, प्रारम्भ होता है। उच्च प्राणियों के शरीर के उत्पन्न होने में भी वही प्रक्रिया होती है, जो 'अमीबा' में पाई जाती है, भेद केवल इतना है कि 'अमीबा' का 'न्यूक्लिअस' तो दो स्वतन्त्र भागों में विभक्त होकर अपनी पूर्व सत्ता बिल्कुल मिटा देता है; दो नए 'अमीबा' पैदा हो जाते हैं, परन्तु ऊँची जाति के प्राणियों में, जिनमें मनुष्य भी शामिल है, प्रोटोप्लाजम का बहुत थोड़ा-सा हिस्सा पृथक् होकर वैज्ञानिक, परिभाषा में नहीं परन्तु मोटे शब्दों में 'अण्डा' या 'वीर्यकीटाणु' बनता है, और उन अण्डों या 'वीर्य-कीटाणुओं को उत्पन्न करनेवाला प्राणी उसी प्रकार के दूसरे अण्डों और 'वीर्य-कीटाणुओं' को समय-समय पर उत्पन्न करता रहता है, और 'अमीबा' की तरह अपनी भौतिक सत्ता को मिटा नहीं देता, किन्तु जीवित बनाये रखता है। जिस काम के लिए 'अमीबा' जैसे निम्न श्रेणी के प्राणी को अपने सारे शरीर के प्राणियों के शरीर का एक बहुत छोटा-सा हिस्सा पर्याप्त होता है। परन्तु ध्यान रखने की बात यह है कि अपने-जैसा प्राणी पैदा करने के लिए अपने सारे शरीर के दो हिस्से कर देने पड़ते हैं, उसी काम के लिए उच्च श्रेणी के प्राणियों के शरीर का एक बहुत छोटा-सा हिस्सा पर्याप्त होता है। परन्तु ध्यान रखने की बात यह है कि अपने-जैसा प्राणी पैदा करने के लिए अपने शरीर का बहुत आवश्यक हिस्सा जुदा करना पड़ता है।

www.thearyasamaj.org

यह छोटा-सा हिस्सा ही पुरुष में 'वीर्य-कीट' तथा स्त्री में 'रज:कण' कहाता है। 'वीर्य-काटों' को अंग्रेजी में 'स्पर्मेटोजोआ' कहते हैं। स्त्री के 'रज:कणों' को अंग्रेजी में 'ओवा' कहते हैं। 'स्पर्मेटोजाआ' तथा 'ओवा' दोनों ही 'न्यूक्लिअस-युक्त प्रोटोप्लाम' के पिण्ड के अतिरिक्त कुछ नहीं हैं। ऊँची जातियों के प्राणियों में जब 'वीर्य-कीट' अथवा 'स्पर्मेटोजाआ' 'रज:कण' अथवा 'ओवा' के साथ मिल जाता है, तब 'ओवा' (स्त्री का बीज) दो, चार, आठ, सोलह, बत्तीस, चौंसठ और इसी प्रकार ऐसे ही छोटे-छोटे कोष्ठों में टूट-टूटकर विभक्त होता जाता है, और बढ़ता जाता हैं। यह वृद्धि 'अमीबा' के समान नहीं होती। 'अमीबा' में तो उसके दो, चार, आठ आदि टुकड़े ही अलग-अलग हो जाते है; उच्च प्राणियों में कोष्ठों के टुकड़े बिलकुल अलग नहीं होते। इनमें कोष्ठों की वृद्धि होती जाती है, परन्तु सब कोष्ठ मिले रहते हैं। उच्च प्राणियों में ऐसा ही होता है। जब इन कोष्ठों को मिलकर एक छोटा-सा पिण्ड बन जाता है, उसमें तन्तु, मांस-पेशियाँ, अस्थियाँ बन जाती हैं, तब वह माता के पेट से निकलकर स्वतन्त्र रूप से जीने लगता है। उससे पूर्व तो वह माता के शरीर का ही हिस्सा रहता है। प्राणियों के शरीर की इसी प्रकार वृद्धि होती हैं, और इसे 'विभाजन-द्वारा वृद्धि' (सैगमण्टेशन, मल्टीप्लिकेशन बाई डिवीजन) या 'कोष्ठ-कल्पना' (सैल्-थियोरी) कहते हैं।

शरीर के अनेक अवयव केवल इन कोष्ठों (सैल्स) से ही बने होते हैं। जिगर उनमें से एक है। 'कोष्ठ' (सैल्) ही तन्तुओं के रूप में पुट्ठों मांस-पेशियों तथा ज्ञान-वाहिनी नाड़ियों की रचना करते हैं। हड्डी तथा दाँत-जैसी मजबूत तथा सख्त चीजें भी मौलिक रूप में कोष्ठों (सैल्स) से बनती हैं। इसलिए कोष्ठ (सैल्) प्राणिमात्र के शरीर की रचना करनेवाली इकाई हैं। कोष्ठों के आपस में मिलने, संयुक्त होने तथा परिवर्तित होने से ही शरीर का निर्माण होता है।

लिंग-भेद- कोष्ठ-विभाजन अर्थात् प्रोटोप्लाज्म तथा न्यूक्लिअस के दो-दो टुकड़े होने से पहले, एक और आवश्यक प्रक्रिया होती है, जिसका हमने अभी तक वर्णन नहीं किया। तालाब की कोई की सूक्ष्म-वीक्षण-यंत्र द्वारा देखने से ज्ञात होता है कि वह दो भिन्न प्रकार के कीटाणुओं से बनी हुई है। इन्हें 'एलेजी' कहते हैं। उस काई में 'न्यूक्लिअस-युक्त प्रोओप्लाज्म' की आमने-सामने दो-दो पंक्तियाँ बन जाती हैं। प्रत्येक पंक्ति के कोष्ठ अपने

www.thearyasamaj.org

सामने के कोष्ठों से मिल जाते हैं, और दोनों के मिलने से एक नवीन कोष्ठ बन जाता है। इस प्रक्रिया में एक कोष्ठ को दूसरे कोष्ठ की तरफ जाते हुए हम सूक्ष्म-वीक्षण यंत्र द्वारा देख सकते हैं। इन कोष्ठों को, जोकि आमने-सामने की दो भिन्न-भिन्न पंक्तियों में होते हैं, क्रमशः 'नर' और 'मादा' कहते हैं। इन कोष्ठों के परस्पर संयुक्त होने की प्रक्रिया को 'संयोग' (कॉञ्जुगेशन) कहते है। यदि कोष्ठों का यह संयोग न हो, तो 'एलेजी' अर्थात् आमने-सामने के कीटाणुओं में एक से अनेक होने की जो प्रक्रिया पाई जाती है, वह भी न हो। कोष्ठों का यह पारस्परिक संयोग सृष्ट्युत्पत्ति का एक आवश्यक सिद्धान्त है।

ऊपर जो-कुछ कहा गया है, उससे यह स्पष्ट हो गया कि 'प्रजनन' दो विभिनन तत्त्वों के संयोग' का फल हैं इन्हीं विभिन्न तत्तवों को प्रचलित भाषा में 'पुरुष' तथा 'स्त्री' अथवा 'नर' तथा 'मादा' कहा जाता है। यद्यपि कभी-कभी तत्त्वों की विभिन्नता, अर्थात् विजातीयता का ज्ञान सूक्ष्म-वीक्षण यंत्र से भी स्पष्ट प्रतीत नहीं होता, तथापि उनके विविध कार्यों को देखकर, निश्चय कर सकते हैं कि वे भिन्न-भिन्न तत्त्व वा लिंग हैं। 'नर' तथा 'मादा'- ये दोनों ही, एक नवीन प्राणी की उत्पत्ति के लिए, 'पुरुष-तत्त्व' तथा स्त्री-तत्त्व'- इन विभिन्न तत्त्वों को उत्पन्न करते हैं, और इन विभिन्न तत्त्वों के सम्मिलन से ही एक नवीन प्राणी की सृष्टि होती है। प्रजनन के लिए आवश्यक इन दोनो तत्त्वों को उत्पन्न करनेवाली इन्द्रियों को 'जननेन्द्रिय'- इस शब्द से कहा जाता है। प्रजनन के आधार-भूत सिद्धान्त सम्पूर्ण विश्व में एक-से हैं इसलिए 'प्रजनन-प्रक्रिया' को और अधिक समझने के लिए हम क्रमशः पौधों, छोटे प्राणियों, बड़े प्राणियों तथा मनुष्य में इन नियमों को देखकर इस प्रक्रिया को विस्तार से समझने का प्रयत्न करेंगे।

पौधों में प्रजनन-प्रक्रिया

'फल' पौधों की जनन-सम्बन्धी इन्द्रियाँ हैं। कुछ फूल 'नर' तत्त्व को उत्पन्न करते हैं, और कुछ 'मादा'- तत्त्व को। कई बार एक ही फूल में दोनों तत्त्व मिले रहते हैं। फूलों के नर-भाग को अंग्रेजी में 'स्टेमन' तथा मादा-भाग को 'पिवस्टिल' कहते हैं। नर-भाग (स्टेमन) में एक प्रकार की सूक्ष्म, शुद्ध घूलि होती है, जिसे पुं-केसर (पौलन) कहते हैं। यही धूलि फूल का जनन-सम्बन्धी मादा-तत्त्व (ओव्यूल) रहता है। जैसे फूल के 'स्टेमन' में 'पौलन' और 'ओव्यूल' के मिलने से बीज या

www.thearyasamaj.org

फल बनता हैं यदि नर तथा मादा-तत्त्व एक ही फूल के भीतर हों, तो वहीं 'बी' की सृष्टि हो जाती है; परन्तु यदि ये दोनों तत्त्व भिन्न-भिन्न पौधों पर स्थित हों तो नर-पुष्प के पु-केसर अर्थात् 'पौलन' को वायु उड़ाकर निकटस्थ मादा-पुष्प के भीतर 'ओव्यूल' में पहूँचा देती है। इस विधि से कई अवस्थाओं मे नर तथा मादा जाति के पुष्पों के बहुत दूर स्थित होने पर भी 'संयोग' हो जाता है। मधुमक्खियाँ, पतंगे आदि अपने पंखों और पाँवों द्वारा 'उत्पादक धूलि' को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले-जाकर जनन-प्रक्रिया में बड़ी सहायता पहुँचाते हैं। छोटी चिड़ियाँ और बेचारा 'स्नेल' इस दृष्टि से बड़े काम के हैं। पौधों की जनन-प्रक्रिया में भाग लेनेवाले कई कीट-पतंगों का इतना महत्त्व है कि कविता की भाषा में उन्हें 'फूलों के विवाह का पुरोहित' कहा गया है।

छोटे प्राणियों में प्रजनन-प्रक्रिया

मछली- कुछ छोटे प्राणियों में जिन विधियों द्वारा 'संयोग' अथवा 'जनन-प्रक्रिया' होती है, वे पौधे की अपेक्षा विभिन्न, अनेक तथा अधिक आश्चर्यजनक हैं। उदाहरणार्थ, मछलियों तथा साँपों में माता-पिता के शरीर से, उनके आपस में मिले बिना ही, नर तथा मादा-तत्त्व निकल आते हैं, और उन तत्त्वों का माता-पिता के शरीर के बाद बाहर ही संयोग हो जाता है। इस अवस्था में एक का दूसरे से स्पर्श बिल्कुल नहीं होता। प्राणियों की इस श्रेणी में, जनन-प्रक्रिया ठीक वैसी ही होती है, जैसी उन पौधों में जिनमें नर-तत्त्व हवा से या कीट-पतंग के पंखों से उड़कर मादा-तत्त्व से जा मिलता है। मादा-मछली के शरीर में बहुत-से अण्डे खास मौसम में पैदा हो जाते है। कई बार इनकी संख्या हजारों तक होती है। इसी समय नर-मछली के अण्डकोष, जो कि उसके शरीर में (कोष्ठगुहा-एबडोमिनल कैविटी में) विद्यमान होते हैं, बढ़ने लगते हैं। इन्हीं अण्डकोषों में वीर्य-कण होते हैं। जब मादा अपने अण्डो को सुरक्षित रखने के लिए जगह ढूँढती है, तो नर चुपचाप उसके ही पीछे हो लेता है, और ज्यों ही वह अण्डों को देती है, त्यों ही वह उनपर वीर्य-कण देता जाता है। इसीसे संयोग हो जाता है और नई मछलियों के अण्डों से गँदला तक हो जाता है।

मेंढ़क- लगभग इसी प्रकार की प्रक्रिया मेंढक की कई जातियों में भी पायी जाती हैं जिस समय मादा अपने अण्डे सुरक्षित रखनेवाली होती है, नर उसकी पीठ पर बैठ जाता है, और तब-तक बैठा रहता है, जबतक कि सब अण्डे सुरक्षित तोर पर रख नहीं दिये

www.thearyasamaj.org

जाते । मादा द्वारा अण्डों के रक्खे जाते ही नर उनपर वीर्य-कण डाल देता है। इस प्रकार नर तथा मादा, दोनों के उत्पादक तत्त्वों के संयोग से जनन-प्रारम्भ होता है। मादा को अण्डे रखने में काफी समय लगता है। तबतक नर उसकी पीठ पर बैठा ही रहता है। इस समय उसके पाँवों में अजीब ढंग के अंगूठे-से निकल आते हैं, जिनसे वह मादा की पीठ पर चिपका रहता है। ये अंगूठे इसी समय निकलते हैं। बच्चा पैदा करने का मौसम समाप्त हो जाने पर ये क्षणिक अंगूठे लुप्त हो जाते हैं, क्योंकि फिर इनकी कोई आवश्यकता नहीं रहती। ये दोनों उदाहरण 'बहि:संयोग' के हैं। इनमें नर तथा मादा-तत्त्वों का संयोग मादा के शरीर के बाहर होता है।

कुछ जालियों में, जिनमें 'अन्त:संयोग' है, नर और मादा एक-दूसरे को स्पर्श नहीं करते, परन्तु फिर भी कई अज्ञात कारणों से नर का वीर्य-कण मादा के शरीर में पहुंच जाता है, और वहाँ पर नर-तत्व के संयोग से अण्डा बढ़ने लगता है। इस प्रकार की जनन-प्रक्रिया में नर तथा मादा का शारीरिक संयोग नहीं होता। संस्कृत-साहित्य में सही या गलत बादल के गर्जने से बगुली के गर्भ हो जाने का वर्णन पाया जाता है।

स्नेल- साँपों में नर तथा मादा की जनेन्द्रियों के पारस्परिक स्पर्शमात्र से संयोग हो जाता है। स्नेल उभय-लिंगी प्राणी है, अर्थात् एक ही स्नेल नर और मादा, दोनों एक-साथ होता है। इसमें नर और मादा का संयोग बड़ी विचित्र रीति से होता है। टी० आर० जोन्स ने इसका निम्न प्रकार वर्णन किया है-

''इनमें जिस विधि से संयोग होता है, वह कुछ कम आश्चर्यजनक नहीं है। इस संयोग का प्रारम्भ असाधारण रीति से होता है। देखनेवाला समझता है कि यह दो प्रेमियों का मिलाप नहीं, अपितु शत्रुओं की लड़ाई है। यह प्राणी स्वभाव से शान्त प्रकृति का है, परन्तु संयोग के समय दोनों में अजीब फुर्ती आ जाती हैं शुरू-शुरू में प्रगाढ़ आलिंगन होता है, फिर दोनों में से एक अपनी शुरू-शुरू में प्रगाढ़ आलिंगन होता है, फिर दोनों में से एक अपनी ग्रीवा के बाई ओर से एक चोड़ी और छोटी-सी थैली को खोलता है। तब दोनों स्नेल परस्पर संयोग करते हैं और दोनों के, एक-दूसरे से, गर्भ ठहर जाता है।'' ऑयस्टर भी उभय-लिंगी प्राणी है, उसमें भी 'आत्म-संयोग' अर्थात् अपने सही गर्भ हो जाता है। **शेष अगले अंक में....**

वैदिक धर्म की जय!
महर्षि दयानन्द की जय!

www.thearyasamaj.org

समाचार

आर्य कार्यकर्त्ता सम्मेलन सम्पन्न

मगध प्रमण्डलीय आर्य सभा एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप सभा बिहार के संयुक्त तत्वावधान में 1 सितम्बर 2013 को डी.ए.वी. स्कूल बिहार शरीफ के सभा भवन में आर्य कार्यकर्त्ता सम्मेलन का आयोजन किया गया। इस अवसर पर पं० सत्योम शास्त्री के पौरोहित्य एवं डायरेक्टर श्री यू.एस. प्रसाद जी यजमानत्व में यज्ञ हुआ जिसमें सभी आगत अतिथियों ने भाग लिया तत्पश्चात् आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के नव नियुक्त प्रधान श्री उमाशंकर प्रसाद जी निदेशक डी.ए.वी. स्कूल्स जोन-2 गया, का आर्य जनो द्वारा अभिनन्दन किया गया। साथ में बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा के मंत्री श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता जी का भी सम्मान शाल ओढ़ाकर किया गया। इस आयोजन से लोग इतने उत्साहित थे कि लोग गाड़ियों में भर-भर कर आये। इस अवसर पर अनेक गणमान्य आर्य जनों ने 'सत्यार्थ प्रकाश का प्रचार कैसे हो, इस विषय पर अपने विचार रखे। प्रमण्डल प्रधान श्री वागीन्द्र कु० आर्य, मंत्री, श्री रामप्यारे प्रसाद, श्री अशोक आर्य, श्री ब्रह्मदेव आर्य श्री भोला आर्य, प्रिस्पल श्री संजय सिंहा एवं प्रिंसप्ल श्री ओझा जी ने सभा को सम्बोधित करते हुए **सत्यार्थ प्रकाश को जन-जन तक पहुचाने**, पर विशेष बल दिया। अपने उद्‌बोधन में प्रतिनिधि सभा के मंत्री श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता जी ने कहा महर्षि का अमर ग्रंथ सत्यार्थ प्रकाश आर्य समाज का प्राण है, इसका प्रचार व्यापक रूप से करें। अंत में निदेशक सम्मानीय यू.एस. प्रसाद जी ने अपने संबोधन में कहा डी.ए.वी. संस्थान महर्षि दयानन्द के विचारों का प्रचार कर रहा है और आगे भी योजनाबद्ध तरीके से कार्यक्रम बनायेगा। सभी वक्ताओं ने **नेमदारगंज में आहूत 21 से 24 नवम्बर 2013 को भव्य सत्यार्थ प्रकाश** सम्मेलन को सफल बनाने पर अपनी सहमति प्रदान की। मंच का संचालन कर रहे क्रांतिकारी कवि सह कार्यक्रम संयोजक संजय सत्यार्थी ने श्रोताओं में उत्साह भरते हुए कहा कि आर्य समाज का निर्माण आन्दोलन के रूप में हुआ और हम सब मिलकर उसे आन्दोलन का रूप दें। समाज में ऋषि विचार की स्थापना के लिये सत्यार्थ प्रकाश को जन-जन तक पहुँचायें और सत्यार्थ प्रकाश सम्मेलन को सफल करें, जिसकी उपस्थिति आर्य जनों ने हाथ उठाकर उनका समर्थन किया। श्री सत्यार्थी ने तन-मन-धन से सहयोग करने की अपील की। अंत में डी.ए.वी. स्कूल देवघर के प्राचार्य ने धन्यवाद प्रस्तुत कर डी.ए.वी. के व्यवहारिक पक्ष रखने का पुरा प्रयास किया तथा सभी उपस्थित जन समूह को इस कार्यक्रम में शामिल होने पर धन्यवाद दिया। तत्पश्चात पं० सत्योम शास्त्री के द्वारा शांतिपाठ कर सभा समाप्त की गयी। ●

www.thearyasamaj.org

जो बोले सो अभय
महर्षि दयानन्द की जय

वैदिक धर्म की जय
सत्यार्थ प्रकाश अमर रहे ।

आर्य प्रादेशिक, प्रतिनिधि उप सभा बिहार के मार्ग दर्शन में
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा पटना की प्रेरणा से

आर्य समाज नेमदारगंज, नवादा के पुरुषार्थ से

महर्षि दयानन्द सरस्वती

डी. ए. वी. पब्लिक स्कूल्स, बिहार प्रक्षेत्र-॥ एवं मगध प्रमण्डलीय आर्य सभा
के
संयुक्त तत्त्वावधान में

भव्य सत्यार्थ प्रकाश सम्मेलन एवं राष्ट्र रक्षा महायज्ञ

दिनांक : 21 नवम्बर से 24 नवम्बर, 2013 तक
स्थान- दुर्गा मण्डप प्रांगण, नेमदारगंज (नवादा-बिहार) 805121

यज्ञ के ब्रह्मा
आचार्य सोमदेव शास्त्री, मुम्बई
आर्य जगत् के उद्‌भट विद्वान,

मुख्य वक्ता
आचार्य वेद प्रकाश श्रोत्रिय, दिल्ली
अन्तर्राष्ट्रीय प्रवक्ता एवं वेदों के प्रकाण्ड विद्वान

उद्‌घाटन कर्त्ता
श्रीयुत आनन्द कुमार आर्य
उप प्रधान- सार्वदेशिक सभा, नई दिल्ली

मुख्य अतिथि
श्री दीन दयाल गुप्त, कोलकाता
मंत्री- आर्य प्रतिनिधि सभा बंगाल
श्री विनय आर्य
उप मंत्री- सार्वदेशिक सभा, दिल्ली
श्री गंगा प्रसाद
प्रधान बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री अंशुदेव आचार्य
प्रधान, आर्य प्रतिनिधि सभा, छत्तीसगढ़
श्री अशोक आर्य, कार्यकारी अध्यक्ष
सत्यार्थ प्रकाश- न्यास उदयपुर
श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता
मंत्री- बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री सत्यदेव गुप्ता
कोषाध्यक्ष- बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
योगाचार्य, उमाशंकर आर्य, सूरत

भजनोपदेश
पं० कुलदीप आर्य, बिजनौर
क्रांतिकारी भजनोपदेशक
बहन सुदेश आर्या, दिल्ली
मधुर भजन गायिका

भव्य शोभा यात्रा- 21 नवम्बर को अपराह्न 1 बजे से
समय सारणी- प्रतिदिन- प्रातः 8 बजे से 1 बजे तक, यज्ञ भजन एवं प्रवचन
संध्या 5 बजे से रात्रि 11:00 बजे तक भजन प्रवचन एवं सम्मान समारोह

सत्यार्थ प्रकाश, जगत गुरू महर्षि दयानन्द का अमर ग्रंथ है
यह आर्य समाज का प्राण है, इसके प्रचार से समाज में नई चेतना का
संचार होगा, अज्ञानता से मुक्ति मिलेगी, आइये वैचारिक क्रांति के लिये सत्यार्थ प्रकाश पढ़े और पढ़ायें ।
तन- मन- धन से सत्यार्थ प्रकाश के प्रचार में सहयोग प्रदान करें।

-: निवेदक :-

प्रधान	मंत्री	स्वागताध्यक्ष	कोषाध्यक्ष	संयोजक
डॉ० वागीन्द्र कु० आर्य प्रमण्डलीय आर्य सभा	डॉ० रामप्यारे प्र० प्रमण्डलीय सभा	डॉ. यु. एस. प्रसाद, प्रधान आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि उप सभा	सत्योमशास्त्री प्रमण्डलीय सभा	प० संजय सत्यार्थी उप मंत्री बि० रा० आर्य प्रतिनिधि सभा एवं सत्यदेव प्र० आर्य मरूत

स्थानीय आर्य समाज के अधिकारी- अश्वनी कुमार, प्रधान, लखीनारायण आर्य, कोषाध्यक्ष, संत शरण आर्य, मंत्री

सम्पर्क सूत्र :- 09006166168

www.thearyasamaj.org

प्रेषक :
सभा-मंत्री
बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा
श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला
पटना-८०० ००४

सेवा में,
श्री/मेसर्स......
ग्रा०......
पो०......
जिला......
(प्राप्ति के न मिलने पर यह अंक प्रेषक को ही लौटा दें।)

मुद्रित सामग्री

आर्य संकल्प रजि. नं०-पी.टी.260

आर्यसमाजस्य दशनियमाः

1. सर्वाः सद्विद्याः तथा ये पदार्थविद्यया ज्ञायन्ते तेषां सर्वेषां मूलः परमेश्वरः अस्ति।
2. ईश्वरः सच्चिदानन्दस्वरूपः, निराकारः सर्वशक्तिमानः, न्यायकारी, दयालुः, अजन्मा, अनन्तः, निर्विकारः, अनादिः, अनुपमः, सर्वाधारः, सर्वेस्वरः, सर्वव्यापकः, सर्वान्तर्यामी, अजरः, अमरः, अभयः, नित्यः, पवित्रः तथा सृष्टिकर्त्ता अस्ति। अतः सः एव उपासनीयः।
3. वेदः सर्वासां सद्विद्यानां पुस्तकं विद्यते। वेदस्य अध्ययनम्, अध्यापनम्, श्रवणम् श्रावणम् च सर्वेषां आर्याणां परमो धर्मो विद्यते।
4. सत्यस्य ग्रहणार्थं तथा असत्यस्य परित्यागार्थं सर्वदा वयं उद्यतः भवेम।
5. सत्यम्, असत्यम् विचारपूर्वकं धर्मानुसारेण सर्वाणि कार्याणि कर्त्तव्यानि।
6. संसारस्य उपकारविधानम् अस्य समाजस्य मुख्यम् उद्देश्यम् वर्तते, अर्थात् शारीरिकं-आत्मिकं-सामाजिकं उन्नति विधानृ च।
7. सर्वैः सह प्रीतिपूर्वकं धर्मानुसारं यथायोग्यं च प्रवर्तनीयम्।
8. अविद्यायाः नाशः विद्यायाः वृद्धिश्च करणीयः।
9. प्रत्येकः मनुष्यः न केवलं आत्मोन्नत्या सन्तुष्टो भवेत् अपितु सर्वेषाम् उन्नत्या आत्मोन्नतिर्जाता इति मन्येत्।
10. सर्वे मानवाः सामाजिक नियमानां सर्वहितकारीनियमानां च पालने पराधीनाः भवेयुः। प्रत्येकं हितोपकारके कार्ये स्वतन्त्रताः भवेयुः।

स्वत्वाधिकारी, बिहार राज्य आर्य प्रतिनिधि सभा,, श्री मुनीश्वरानन्द भवन, नयाटोला, पटना-4 के लिए श्री रमेन्द्र कुमार गुप्ता (मंत्री) द्वारा जय उमा प्रिन्टर्स, पटना द्वारा मुद्रित एवं प्रकाशित।